₹ ~~30/-~~ 20/-

सत्य सदैव

www.satyasadev.com PRGI NO : DELHIN/2017/74560 वर्ष:9, अंक:06, जून - 2026 निर्भीक, निष्पक्ष एवं निष्ठा के साथ

3F का भूचाल

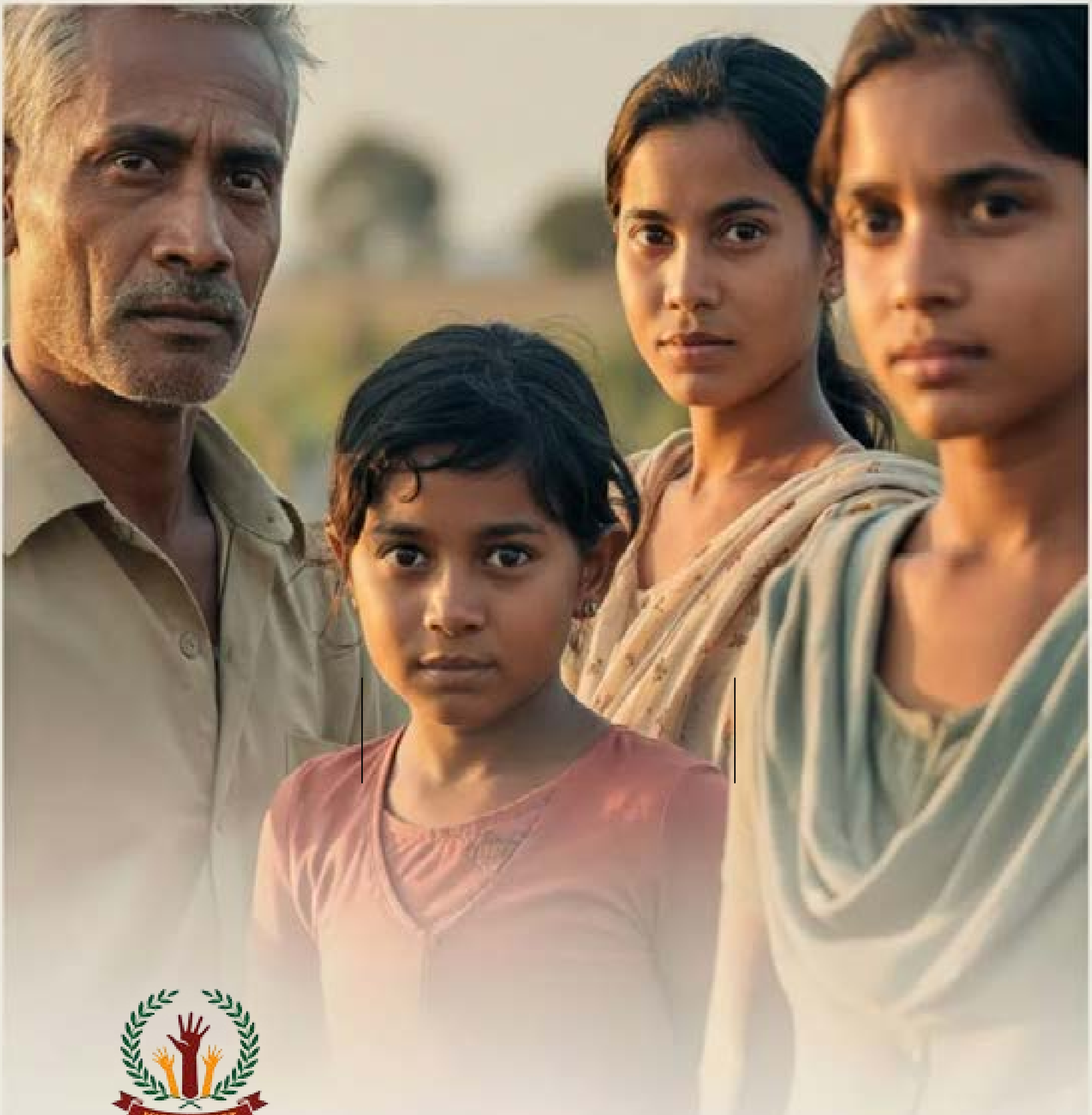

KIRTI TRUST

Compassion • Empowerment • Sustainability

EMPOWERING Lives
BUILDING Futures

CONTACT US

Head Office
M-131 ABL Work Space,
Connaught Place,
New Delhi-110001

Regd. Office
S-505, School Block,
Shakarpur, New
Delhi-110092

Project Office
Village & Post Office Kathura
District Sonipat (Haryana)
PIN- 131301

@kirtitrust
fb.com/kirtitrust
@kirti_trust

www.kirtitrust.org
info@kirtitrust.org

+91-9254-29-3293
+91-9050-29-3293

सत्य सदैव

निर्भीक, निष्पक्ष एवं निष्ठा के साथ

www.satyasadev.com PRGI NO : DELHIN/2017/74560

वर्ष:9, अंक:06, जून-2026

संपादक	राकेश कुमार
मुख्य कार्यकारी संपादक	श्रीराजेश
उप संपादक	संतु दास, मनोज कुमार
सहायक उप संपादक	विशालश्योकंद,व्यास तिवारी
विधि संपादक	एडवोकेट राखी शर्मा
कला संपादक	अरुण पटेल
मुख्य संवाददाता	प्रवेश शर्मा
जनसंपर्क अधिकारी	संगीता रानी
तकनीक व साइबर हेड	अनुज कुमार सिंह
प्रसार प्रबंधक	नीतिश भारद्वाज
चार्टर्ड अकाउंटेंट	शिव शंकर झा

ब्यूरो

दीप्तानु दास (अगरतला)	लक्की सिंह (भोपाल)
पंकज मौर्य (लखनऊ)	संजू जोशी (देहरादून)
आशीष कुमार (जयपुर)	अजय शर्मा (श्री नगर)
अमित दास (गुवाहाटी)	नरेश आर्य (शिमला)
तेज सिंह (चंडीगढ़)	अजय कुमार(अहमदाबाद)
जितेन्द्र सिंह (रांची)	श्रीकांत (मुंबई)

संपादकीय व कॉरपोरेट कार्यालय

एस 40, स्कूल ब्लॉक, शकरपुर,
नई दिल्ली-110092
ई-मेलः editor@satyasadev.com
वेबसाइटः www.satyasadev.com
दूरभाषः +91 9050 29 3293

उपरोक्त सभी पद अवैतनिक हैं। पत्रिका में प्रकाशित आलेखों में व्यक्त विचार पूर्णतः लेखकों के अपने हैं; सत्य-सदैव का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

स्वामी,प्रकाशक,मुद्रक एवं संपादक **राकेश कुमार** द्वारा मेसर्स आला प्रिंटिंग प्रेस, 3636, कटरा दिना बेग, लालकुआं दिल्ली-110006-से मुद्रित कराकर 19बी, जनता फ्लैट्स, पीरागढ़ी, नई दिल्ली 110041 से प्रकाशित

सुधि पाठकों एवं सम्मानित लेखकों से विनम्र आग्रह है कि वे अपनी प्रतिक्रियाएँ एवं प्रकाशनार्थ रचनाएँ ई-मेल द्वारा editor@satyasadev.com पर प्रेषित करें।

संपादकीय

राकेश कुमार, संपादक

मौद्रिक तानाशाही एवं विखंडित न्याय

पूंजी का स्वभाव चंचल है, किंतु उसका प्रस्थान प्रलयंकारी होता है। जब वाशिंगटन, लंदन या फ्रैंकफर्ट के वातानुकूलित रणनीतिक कक्षों में ब्याज दरों का विवर्तन होता है, तो उसकी गूंज कोलंबो, अकरा और इस्लामाबाद की निर्धन बस्तियों में अस्तित्वगत संकट बनकर सुनाई देती है। अमेरिकी फेडरल रिजर्व द्वारा पिछले चार दशकों की सर्वाधिक तीव्र गति से की गई 525 बेसिस प्वाइंट की वृद्धि मात्र एक सांख्यिकीय परिशोधन नहीं थी,यह ग्लोबल साउथ की स्नायु-प्रणाली पर एक ऐसा प्रहार था, जिसने आर्थिक संप्रभुता के दावों की कलई खोल दी।

आज की अंतर्संबंधित वित्तीय वास्तुकला में पूंजी किसी के प्रति वफादार नहीं है। जैसे ही बड़ी अर्थव्यवस्थाएं अपनी ब्याज दरें बढ़ाती हैं, 'जोखिम बनाम मुनाफे' का संतुलन बिगड़ जाता है और खरबों डॉलर का निवेश उभरते बाजारों से पलायन कर पुनः डॉलर और यूरो की सुरक्षित शरण में लौट जाता है। अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के आंकड़े इस विद्रूपता की पुष्टि करते हैं कि वैश्विक अनिश्चितता की एक लघु लहर भी विकासशील राष्ट्रों की तिमाही जीडीपी का एक प्रतिशत रातों-रात वाष्पित कर सकती है। यह उस सिस्टमकी निष्ठुरता है, जिसे विषमता के पोषण के लिए ही गढ़ा गया है।

शुरुआती स्थिति ही नियति का निर्धारण करती है। घाना, श्रीलंका और पाकिस्तान की राजकोषीय नाकामी केवल उनके कुशासन का परिणाम नहीं थी, बल्कि वे उस समय चक्रवात के केंद्र में खड़े थे जब उनके पास विदेशी मुद्रा भंडार की 'ऑक्सीजन' न्यूनतम थी। जब पश्चिमी देश अपनी सीमाओं की रक्षा के लिए मौद्रिक कठोरता अपनाते हैं, तो वे इस सत्य की अनदेखी कर देते हैं कि उनके निर्णय सीमाओं के पार उन अर्थव्यवस्थाओं का गला घोंट रहे हैं जो ब्रिटिश पाउंड या यूरो में ऋण चुकाने के लिए अभिशप्त हैं। 14 अफ्रीकी राष्ट्रों द्वारा यूरो से जुड़ी मुद्रा का उपयोग करना इसी 'वित्तीय औपनिवेशिकवाद' का आधुनिक संस्करण है, जहां निर्णय कहीं और लिए जाते हैं और परिणाम कहीं और भुगते जाते हैं।

वास्तविक संकट सुशासन की कमी नहीं, बल्कि उस विधिक ढांचे का है जो 21वीं सदी के यथार्थ से विमुख है। आईएमएफ जैसे संस्थान, जो संकटमोचक बनकर उभरते हैं, वे ही वसूली की ऐसी कठोर शर्तें आरोपित करते हैं जो अंततः उसी सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर देती हैं जिसे बचाने का वे दावा करते हैं। यह डिजाइन की खामी नहीं है, बल्कि यह स्वयं एक 'डिजाइन' है। जब तक वैश्विक गवर्नेंस उन हाथों में कैद रहेगी जिनके पास सर्वाधिक मत हैं और जो स्वयं संकट से अप्रभावित हैं, तब तक आर्थिक न्याय केवल एक कूटनीतिक मृगतृष्णा ही बना रहेगा। वैश्विक मौद्रिक नीति आज सीमाओं से परे है, किंतु वैश्विक जवाबदेही आज भी भौगोलिक स्वार्थों की बंदी है। ❍❍❍

श्रीराजेश
मुख्य कार्यकारी संपादक

स्वर्ण का सम्मोहन

जब भी मानवीय तृष्णा के प्रलयंकारी विवर्तन अंकित किए जाएंगे, स्वर्ण की धवल रश्मियां वहां एक निर्णायक साक्ष्य के रूप में उपस्थित रहेंगी। इतिहास के मानचित्र पर वर्ष 1848 की वह धुंधली भोर, जब कैलिफोर्निया की एक आरा मशीन के समीप स्वर्ण-कणों का प्रथम प्रकटीकरण हुआ, उसने केवल एक राष्ट्र की नियति नहीं बदली, बल्कि स्वर्ण को विश्व की सर्वाधिक वांछित धातु के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया। वह खोज केवल एक खनिज की प्राप्ति नहीं थी, बल्कि एक ऐसे 'स्वर्ण-ज्वर' का सूत्रपात था जिसने निर्जन बस्तियों को रातों-रात महानगरों में रूपांतरित कर दिया। कोलोमा जैसा उपेक्षित कस्बा तीन लाख भाग्य-अन्वेषकों का रणांगण बन गया और 800 निवासियों वाला सन फ्रांसिस्को का लघु बंदरगाह भविष्य की 'सिलिकॉन वैली' की आधारशिला रखने लगा।

किंतु, स्वर्ण के प्रति यह आसक्ति आधुनिक युग की देन नहीं है। 3000 ईसा पूर्व में मिस्र की खदानों से लेकर 700 ईसा पूर्व में तुर्की के विनिमय सिक्कों तक, स्वर्ण सदैव सत्ता और स्थिरता का पर्याय रहा है। भारत के संदर्भ में यह संबंध और भी प्राचीन और गहरा है। जब मिस्र ने इस पीली धातु का उत्खनन प्रारंभ भी नहीं किया था, उससे एक सहस्राब्दी पूर्व—4000 ईसा पूर्व से—भारत का स्वर्ण के साथ एक अलौकिक तादात्म्य स्थापित हो चुका था। शताब्दियों से यह धातु कुलीन वर्ग के लिए वैभव का प्रतीक और जनसाधारण के लिए 'मूल्य संचय' का अंतिम आश्रय रही है। यही कारण है कि जब वर्तमान नेतृत्व ने स्वर्ण के आयात में कटौती का आह्वान किया, तो उसने राष्ट्र की उस सामरिक नस को स्पर्श किया जो भावनाओं और अर्थतंत्र के संगम पर स्थित है।

भारतीय तिजोरियों में संचित लगभग 35,000 मीट्रिक टन स्वर्ण केवल आभूषण नहीं, बल्कि 5 ट्रिलियन डॉलर का वह अघोषित सामरिक दुर्ग है, जो राष्ट्र की नाममात्र जीडीपी को भी बौना सिद्ध कर देता है। इस विस्मयकारी चमक के नेपथ्य में यद्यपि एक और यथार्थ मौन खड़ा है। स्वर्ण की वृद्धि स्तब्ध करने वाली अवश्य है, किंतु इक्विटी के उत्कर्ष के सम्मुख यह फीकी प्रतीत होती है। 1979 के पश्चात जहां स्वर्ण ने 175 गुना की प्रगति की, वहीं सेंसेक्स 750 गुना की प्रचंड वृद्धि के साथ निवेशकों की पूंजी को पल्लवित कर रहा है। भारत का प्रबुद्ध मध्यम वर्ग अब इस सत्य को आत्मसात कर रहा है, जिसके परिणामस्वरूप देश में डीमैट खातों और 'एसआईपी' के माध्यम से प्रवाहित होता घरेलू धन भारतीय बाजार को संजीवनी प्रदान कर रहा है।

किंतु वर्तमान प्रश्न निवेश की श्रेष्ठता का नहीं, बल्कि सामरिक विवशता का है। हॉर्मुज जलडमरूमध्य की सामरिक जकड़न और तेल की बढ़ती कीमतों ने कूटनीति के सम्मुख एक कठोर विकल्प प्रस्तुत किया है। भारत की ऊर्जा सुरक्षा कच्चे तेल के आयात पर टिकी है, जिसकी वार्षिक लागत लगभग 120 अरब डॉलर है। जब हॉर्मुज का द्वार अवरुद्ध हो और कच्चे तेल का मूल्य 100 डॉलर के पार पहुँच जाए, तो राष्ट्र पर 25 अरब डॉलर का अतिरिक्त बोझ पड़ना सुनिश्चित है। यह वह सामरिक रिक्तता है जिसे भरने के लिए स्वर्ण के आयात में कटौती ही एकमात्र तार्किक मार्ग है।

यह कालखंड भारत के लिए एक मनोवैज्ञानिक विवर्तन का समय है। हम एक ऐसे युग में प्रविष्ट हो चुके हैं जहां संप्रभुता केवल सीमाओं पर तैनात प्रहरियों से नहीं, बल्कि विदेशी मुद्रा भंडार की तिजोरी और तेल की पाइपलाइनों की स्थिरता से मापी जाती है। स्वर्ण के प्रति हमारी सहस्राब्दियों पुरानी आसक्ति को अब राष्ट्र की सामरिक आवश्यकताओं के साथ सामंजस्य बिठाना होगा। हॉर्मुज का संकट हमें यह स्मरण करा रहा है कि एक महाशक्ति बनने के मार्ग में व्यक्तिगत विलासिता और राष्ट्रीय सुरक्षा के मध्य का चुनाव ही नेतृत्व की वास्तविक परीक्षा है। भारत के सक्रिय निवेशक आज उस नवीन आर्थिक चेतना के अग्रदूत हैं, जो यह समझते हैं कि राष्ट्र की शक्ति अब केवल संचित स्वर्ण में नहीं, बल्कि गतिशील पूंजी और तकनीकी नवाचार के प्रवेग में निहित है।

OOO

पश्चिम एशिया में बढ़ते तनाव और ऊर्जा सुरक्षा पर मंडराते संकट के बीच भारत एक महत्वपूर्ण आर्थिक दुविधा का सामना कर रहा है। स्वर्ण के प्रति पारंपरिक आकर्षण और राष्ट्रीय हितों की नई आवश्यकताओं के बीच संतुलन स्थापित करना अब केवल निवेश का नहीं, बल्कि रणनीतिक विवेक का प्रश्न बन गया है।

भारतीय तिजोरियों में संचित लगभग 35,000 मीट्रिक टन स्वर्ण केवल आभूषण नहीं, बल्कि 5 ट्रिलियन डॉलर का वह अघोषित सामरिक दुर्ग है, जो राष्ट्र की नाममात्र जीडीपी को भी बौना सिद्ध कर देता है। इस विस्मयकारी चमक के नेपथ्य में यद्यपि एक और यथार्थ मौन खड़ा है। स्वर्ण की वृद्धि स्तब्ध करने वाली अवश्य है, किंतु इक्विटी के उत्कर्ष के सम्मुख यह फीकी प्रतीत होती है। 1979 के पश्चात जहां स्वर्ण ने 175 गुना की प्रगति की, वहीं सेंसेक्स 750 गुना की प्रचंड वृद्धि के साथ निवेशकों की पूंजी को पल्लवित कर रहा है।

इस अंक में खास...

आवरण कथा

14 3F का भूचाल

वैभव सूर्यवंशी: आधुनिक...	10
नरेंद्र मोदी प्रधान-राजनयिक	26
मणिपुर: घृणा का भस्मासुर	31
मेधा की अंत्येष्टि	34
भारत का अभ्युदय	39
शिलाओं से सत्य का अनावरण	42

04

अजेय बेड़ा: ग्रेट निकोबार...

ग्रे ट निकोबार परियोजना के चतुर्दिक् व्याप्त वर्तमान राजनैतिक विवादों के कुहासे को भेदने के लिए हमें अपनी 'दृष्टि के विवर्तन' की नितांत आवश्यकता है। हमें अपनी दृष्टि को 'भूमि' से हटाकर 'जल' की ओर, और 'विकास' के संकुचित विमर्श से मोड़कर 'सुरक्षा' के...

08

इंडी गठबंधन का अवसान?

27 सितंबर 2025 की वह काली तिथि, जब तमिलनाडु के करूर में अभिनेता-राजनेता विजय की पार्टी 'तमिलगा वेट्री कज़गम' (टीवीके) की रैली में उमड़े जनसैलाब के मध्य मची भगदड़ ने 41 प्राणों की आहुति ले ली, तो समूचा राज्य स्तब्ध रह गया। मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन ने...

'कॉकरोच' का रणघोष

भारतीय राजनीति के इतिहास में कुछ विवर्तन अत्यंत मंद गति से होते हैं, किंतु कुछ ऐसे होते हैं जो किसी विद्युत कौंध की भांति समूचे राष्ट्र के मानस को झकझोर देते हैं। मध्य मई का यह कालखंड एक ऐसी ही विस्मयकारी घटना का साक्षी बना है। एक ऐसी 'पार्टी' का अभ्युदय...

22

44

भूमि ने किया 'पिंक ई-रिक्शा' पहल का समर्थन

अजेय बेड़ा

ग्रेट निकोबार और हिंद महासागर का सामरिक विवर्तन

ग्रेट निकोबार परियोजना केवल एक विकास योजना नहीं, बल्कि हिंद महासागर क्षेत्र में भारत की उभरती सामरिक महत्वाकांक्षाओं का घोषणापत्र है। पर्यावरण, जनजातीय संरक्षण और राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच चल रही यह बहस दरअसल उस प्रश्न का उत्तर तलाश रही है कि 21वीं सदी में भारत अपनी समुद्री शक्ति को किस रूप में परिभाषित करेगा।

गौतम चिकरमाने

ग्रेट निकोबार परियोजना के चतुर्दिक् व्याप्त वर्तमान राजनैतिक विवादों के कुहासे को भेदने के लिए हमें अपनी 'दृष्टि के विवर्तन' की नितांत आवश्यकता है। हमें अपनी दृष्टि को 'भूमि' से हटाकर 'जल' की ओर, और 'विकास' के संकुचित विमर्श से मोड़कर 'सुरक्षा' के व्यापक क्षितिज की ओर ले जाना होगा। ग्रेट निकोबार द्वीप मात्र 1,045 वर्ग किलोमीटर का एक निर्जीव भू-खंड नहीं है, बल्कि यह भारत के उस नैसर्गिक विमानवाहक पोतऔर अजेय बेड़े का दक्षिणतम सोपान है, जो हमारे अनन्य आर्थिक क्षेत्र (ईईजेड) के माध्यम से भारत के आर्थिक भूगोल को 6 लाख वर्ग किलोमीटर तक विस्तृत करता है। इस विशालता का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि अंडमान और निकोबार द्वीपों का यह आर्थिक क्षेत्र राजस्थान और मध्य प्रदेश के सम्मिलित क्षेत्रफल के निकट है,यह यूक्रेन, फ्रांस अथवा स्पेन जैसे राष्ट्रों के कुल भू-भाग से भी वृहत है।

मूक दर्शक से सामरिक प्रहरी तक

मलक्का जलडमरूमध्य—विश्व की वह सामरिक नस जहां से वैश्विक व्यापार का 30 प्रतिशत प्रवाहित होता है—ग्रेट निकोबार से मात्र 40 समुद्री मील या 74 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह दूरी कोहिमा और दीमापुर के मध्य के अंतराल से अधिक नहीं है। दशकों तक ग्रेट निकोबार एक मूक दर्शक की भांति इस जलमार्ग से गुजरते उस वैभव को निहारता रहा है, जिसमें वैश्विक तेल का 29 प्रतिशत भाग सम्मिलित है। मलक्का जलडमरूमध्य पश्चिम एशिया के ऊर्जा उत्पादकों और पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व एशिया के बढ़ते उपभोक्ताओं, विशेषकर चीन, के मध्य का लघुतम सेतु है।

वर्तमान कालखंड में, जब ऊर्जा के चोक-पॉइंट्स का शस्त्रीकरण हो रहा है—जैसा कि हॉर्मुज जलडमरूमध्य में अमेरिका और ईरान के मध्य देखा गया—तो भारत के लिए मलक्का के सामरिक महत्व को विस्मृत करना आत्मघाती होगा। यह जलमार्ग भारत के निर्यात और रूसी तेल के आयात के लिए भी अपरिहार्य है।

भारत की प्रगति ने सदैव लोकतंत्र की परीक्षा दी है, किंतु जब राष्ट्र की संप्रभुता दांव पर हो, तो सुरक्षा की श्रेणी सदैव उच्चतम होती है। भारत को अब अपनी दृष्टि को 'अधिकारों' से हटाकर 'सुरक्षा' की ओर मोड़ना ही होगा। अतीत की बहसें वर्तमान की सामरिक मांगों को निर्देशित नहीं कर सकतीं।

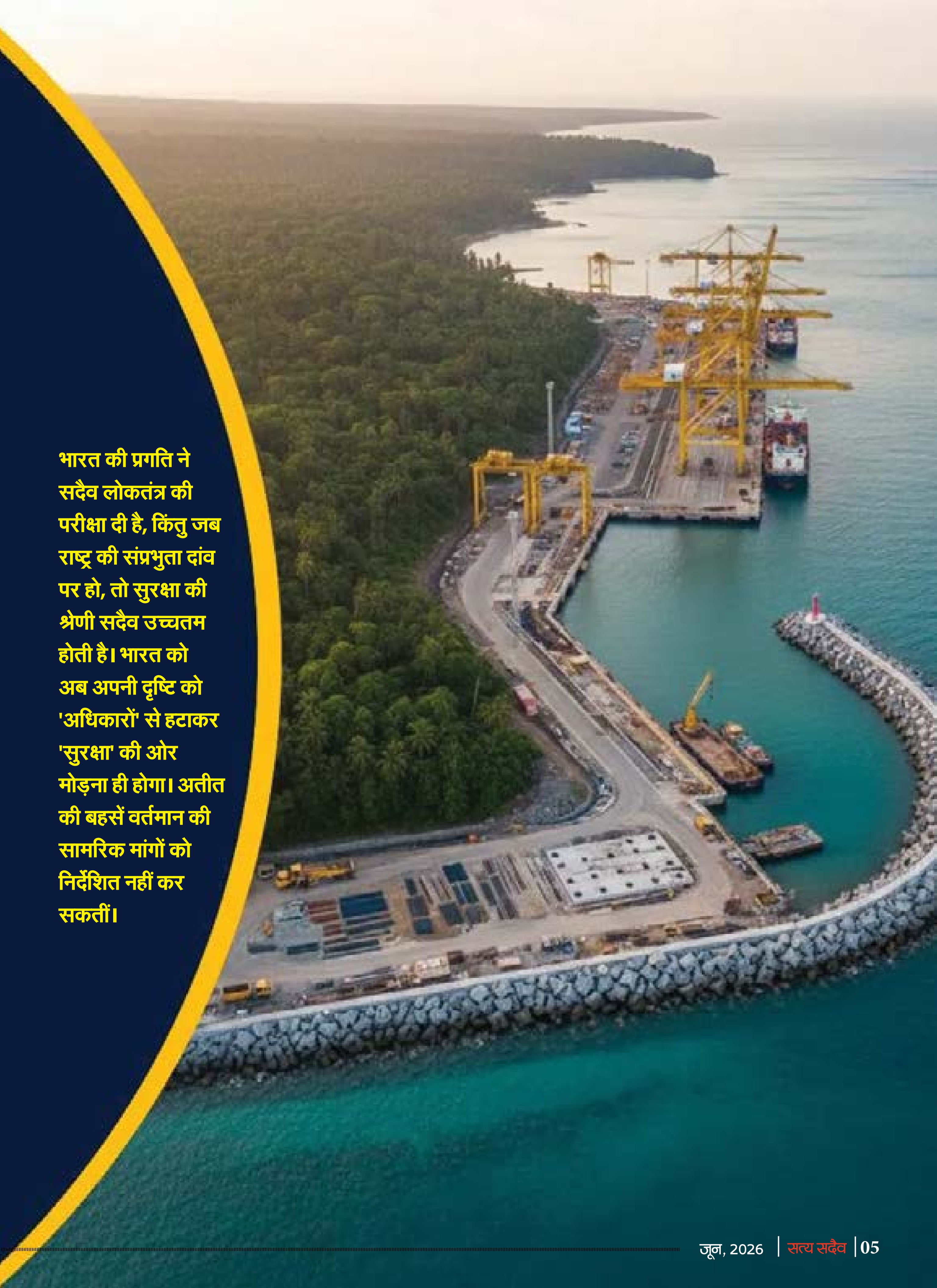

इसे भारत के विरुद्ध एक अस्त्र के रूप में प्रयुक्त होने से रोकने के लिए एक रणनीतिक प्रतिरोधअनिवार्य है। उत्तर में स्थित अंडमान और निकोबार कमान (एएनसी) का विस्तार यदि ग्रेट निकोबार तक होता है, तो यह 780 किलोमीटर लंबी द्वीप श्रृंखला पर एक अभेद्य सुरक्षा कवच निर्मित कर देगा।

विरोध का पुरातन व्याकरण

ग्रेट निकोबार परियोजना को केवल भारत के राजनैतिक अर्थशास्त्र के चश्मे से देखना एक वैचारिक त्रुटि होगी। पिछली शताब्दी की विरोध की राजनीति—नर्मदा से लेकर नियमागिरि और नंदीग्राम तक—ने यद्यपि विस्थापन और पुनर्वास के महत्वपूर्ण प्रश्न उठाए, किंतु 21वीं सदी के बदलते वैश्विक यथार्थ में वह 'टूलकिट' अब अप्रासंगिक हो चुकी है। 1970 के दशक के चिपको आंदोलन से लेकर 2010 के कुडनकुलम परमाणु संयंत्र के विरोध तक, बुनियादी ढांचे के निर्माण की प्रत्येक चेष्टा वैचारिक आग्रहों और बाह्य वित्तपोषित स्वयंसेवी संस्थाओं (एनजीओ) के अवरोधों से टकराती रही है।

गुजरात का सरदार सरोवर बांध हो या नियमागिरि की पहाड़ियों में वेदांता का उत्खनन—प्रत्येक बार भारत की आर्थिक महत्वाकांक्षाएं राजनैतिक जड़ता की भेंट चढ़ती रहीं।'

विकास' की परिभाषा को निर्वाचित कार्यपालिका, न्यायपालिका और संकुचित हितों वाले समूहों ने अपनी सुविधानुसार विरूपित किया है। किंतु ग्रेट निकोबार का संकल्प इस संपूर्ण विमर्श के व्याकरण को ही परिवर्तित कर देता है। यहाँ दांव पर केवल आर्थिक लाभ नहीं, बल्कि ऊर्जा सुरक्षा, व्यापारिक मार्ग और क्षेत्र में भारत की अधिनायकवादी भूमिका है।

संरक्षण और स्वावलंबन

परियोजना के रूपांकन में द्वीप पर निवास करने वाले शोम्पेंस (237 व्यक्ति) और निकोबारी (1,094 व्यक्ति) समुदायों के हितों को प्राथमिकता दी गई है। सरकार ने यह दृढ़ संकल्प व्यक्त किया है कि किसी भी जनजातीय समुदाय को विस्थापित नहीं किया जाएगा। द्वीप के कुल क्षेत्रफल का 751.07 वर्ग किलोमीटर भाग जनजातीय आरक्षित क्षेत्र के रूप में चिन्हित है। परियोजना केवल 166.10 वर्ग किलोमीटर भू-भाग का उपयोग करेगी। यद्यपि यह लोकतांत्रिक नीति-निर्माण की सीमाओं को दर्शाता है, किंतु सामरिक दूरदर्शिता की मांग है कि हम आगामी दशकों नहीं, अपितु शताब्दियों का मानचित्र गढ़ें।

166 वर्ग किलोमीटर का यह क्षेत्र फ्रैंकफर्ट के आकार का आधा और चेन्नई का मात्र एक चौथाई है। यदि हम इसे एक वैश्विक सैन्य और वाणिज्यिक केंद्र बनाना चाहते हैं, तो हमें होनोलूलू जैसे मॉडलों का अनुकरण करना होगा। विश्व स्तरीय बुनियादी ढांचा केवल ईंट और पत्थर से निर्मित नहीं होता,उसके लिए वैश्विक प्रतिभाओं की आवश्यकता होती है। और प्रतिभाएं तभी आकर्षित होंगी जब वहां परिवार के लिए शिक्षा, स्वास्थ्य और आधुनिकजीवन की श्रेष्ठतम सुविधाएं उपलब्ध होंगी।

जोखिम का भूगोल और सामरिक अनिवार्यता

ग्रेट निकोबार का 'सीस्मिक जोन 5' में होना यद्यपि इसे भूकंप के प्रति संवेदनशील बनाता है, किंतु क्या इसी आधार पर विकास को जड़वत किया जा सकता है? यदि जापान, मैक्सिको और चीन जैसे राष्ट्र भूकंपीय विभीषिकाओं के मध्य गगनचुंबी सभ्यताओं का निर्माण कर सकते हैं, तो भारत क्यों नहीं? उत्तर केवल प्रतिरोधी नगरीय नियोजनमें निहित है। हमें द्वीप के प्राचीन वनों, पांच बारहमासी नदियों और पच्चीस मीठे पानी की धाराओं के नाजुक पारिस्थितिकी तंत्र को भंग किए बिना आधुनिक बस्तियों को वन की हरियाली के साथ बुनना होगा।

ग्रेट निकोबार को उत्तर में लैंडफॉल द्वीप से प्रारंभ होने वाली एक वृहत सामरिक श्रृंखला के दक्षिणतम लंगर के रूप में देखा जाना चाहिए। इसके लिए केवल एक या दो नहीं, बल्कि पांच हवाई अड्डों और द्वीपों के मध्य सघन नौका सेवाओं (फेरी सर्विसेस) की आवश्यकता है, जो सुरक्षा और पर्यटन दोनों की धमनियां बनें।

भू-राजनीतिक संविदा

एक नवीन विश्व व्यवस्था आकार ले रही है, जहां तकनीक, वित्त, ऊर्जा और समुद्री मार्ग—सब कुछ एक शस्त्र की भांति प्रयुक्त हो रहे हैं। जब सब कुछ एक शस्त्र हो, तो प्रत्येक व्यक्ति एक संभावित शिकार बन जाता है। ग्रेट निकोबार में प्रस्तावित बंदरगाह, हवाई अड्डा और पावर प्लांट इसी सामरिक अराजकता के प्रति भारत का उत्तर है। यह शीत युद्ध की समाप्ति के पश्चात के सर्वाधिक अस्थिर वातावरण में भारत की सुरक्षा का दुर्ग है।

अरण्य और जनजातियों की चिंताएं यद्यपि वैध हैं, किंतु उन्हें राष्ट्र की सुरक्षा की अनिवार्यताओं के विरुद्ध खड़ा नहीं किया जा सकता।

भारत की प्रगति ने सदैव लोकतंत्र की परीक्षा दी है, किंतु जब राष्ट्र की संप्रभुता दांव पर हो, तो सुरक्षा की श्रेणी सदैव उच्चतम होती है। भारत को अब अपनी दृष्टि को 'अधिकारों' से हटाकर 'सुरक्षा' की ओर मोड़ना ही होगा। अतीत की बहसें वर्तमान की सामरिक मांगों को निर्देशित नहीं कर सकतीं। ○○○

यह आलेख सर्वप्रथम ऑब्जर्वर रिसर्च फाउंडेशन में प्रकाशित है और लेखक इसके वाइस प्रेसिडेंट हैं।

गुजरात का सरदार सरोवर बांध हो या नियमागिरि की पहाड़ियों में वेदांता का उत्खनन—प्रत्येक बार भारत की आर्थिक महत्वाकांक्षाएं राजनैतिक जड़ता की भेंट चढ़ती रहीं। '

इंडी गठबंधन का अवसान?

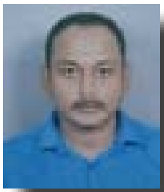

संतु दास

2026 के चुनावी परिणामों ने विपक्षी एकता के उस आवरण को चीर दिया है, जिसके पीछे वर्षों से अंतर्विरोध पल रहे थे। महत्वाकांक्षाओं, क्षेत्रीय प्रतिस्पर्धाओं और नेतृत्व संघर्षों के बीच 'इंडी' ब्लॉक अब एक राजनीतिक विकल्प कम और विघटनशील प्रयोग अधिक प्रतीत होने लगा है।

27 सितंबर 2025 की वह काली तिथि, जब तमिलनाडु के करूर में अभिनेता-राजनेता विजय की पार्टी 'तमिलगा वेट्री कज़गम' (टीवीके) की रैली में उमड़े जनसैलाब के मध्य मची भगदड़ ने 41 प्राणों की आहुति ले ली, तो समूचा राज्य स्तब्ध रह गया। मुख्यमंत्री एम.के. स्टालिन ने क्षतिपूर्ति की घोषणा की और विधिक कार्यवाही प्रारंभ हुई। किंतु, राजनैतिक गलियारों में वास्तविक स्पंदन तब उत्पन्न हुआ जब राहुल गांधी ने विजय को दूरभाष पर संवेदना प्रेषित की। यह केवल मानवीय संवेदना का प्रकटीकरण नहीं था, बल्कि यह एक अत्यंत प्रखर सामरिक संदेश था। राष्ट्रीय प्रतिपक्ष के नेता ने उस व्यक्ति के साथ सीधा संवाद स्थापित कर लिया था, जो कांग्रेस के सबसे पुराने और महत्वपूर्ण दक्षिणी साझीदार—द्रमुक—के लिए सबसे बड़ा अस्तित्वगत संकट बनकर उभर रहा था। स्टालिन, जो राहुल को सार्वजनिक रूप से अपना 'बड़ा भाई' कहते आए थे, उनके लिए यह संवाद किसी कूटनीतिक विश्वासघात से कम नहीं था। 2026 के विधानसभा चुनाव परिणामों ने उस अदृश्य दरार को पूर्णतः अनावरित कर दिया है, जो अब 'इंडी' ब्लॉक के प्रत्येक अंग में रिस रही है।

एक वैचारिक मरुस्थल

जून 2023 में जब 28 राजनैतिक दलों ने मिलकर 'इंडी' ब्लॉक के अभ्युदय की घोषणा की थी, तब वहां उत्साह का ज्वार तो था, किंतु किसी न्यूनतम साझा कार्यक्रमकी ठोस शिला अनुपस्थित थी। 2004 और 2009 की यूपीए सरकारों के पास एक सुव्यवस्थित कार्ययोजना थी, जो गठबंधन के सहयोगियों को एक साझा धरातल पर खड़े होने के लिए विवश करती थी। किंतु 'इंडी' ब्लॉक ने ऐसी किसी भी संविदा को गढ़ने से परहेज किया, क्योंकि किसी भी प्रकार की सहमति उनके अंतर्निहित मतभेदों को सार्वजनिक कर देती।

राजनैतिक रणनीतिकार अमिताभ तिवारी के अनुसार, यह गठबंधन किसी विचारधारा की नींव पर नहीं, बल्कि केवल 'नरेंद्र मोदी के विरोध' की एक क्षणभंगुर मनोदशा पर टिका था। यह एक ऐसा मंच था जिसमें सम्मिलित सामग्रियां एक-दूसरे के विरुद्ध ही युद्धरत थीं। बंगाल में तृणमूल और

कांग्रेस का घर्षण, और केरलम में वामपंथ एवं कांग्रेस की प्रतिद्वंद्विता इस विद्रूप सत्य का प्रमाण थी कि यह गठबंधन केवल एक राजनैतिक विवशता थी। जब तक क्षेत्रीय दलों को यह आभास रहा कि कांग्रेस नेतृत्व का दावा नहीं करेगी, तब तक यह ढांचा टिका रहा, किंतु जैसे ही कांग्रेस ने अधिनायकत्व की चेष्टा की, यह 'ताश के पत्तों का महल' भरभराकर ढहने लगा।

ममता और राहुल

'इंडी' ब्लॉक की समस्त विसंगतियों में राहुल गांधी और ममता बनर्जी का संबंध सर्वाधिक जटिल और विद्रूप रहा है। पश्चिम बंगाल के रणाांगण में दो दशकों में प्रथम बार कांग्रेस ने सभी 294 सीटों पर स्वतंत्र रूप से चुनाव लड़कर तृणमूल के वर्चस्व को चुनौती दी। राहुल गांधी ने ममता के शासन को आतंक का राजऔर गुंडा राजकी संज्ञा देकर कूटनीति की समस्त मर्यादाओं को विस्थापित कर दिया। आसनसोल में एक कांग्रेस कार्यकर्ता की हत्या के पश्चात राहुल का यह वक्तव्य कि ₹टीएमसी का चरित्र ही प्रतिपक्ष का दमन करना है,₹ उस वैचारिक खाई को स्पष्ट करता है जिसे पाटना अब असंभव है।

विडंबना देखिए कि एक ओर राहुल गांधी राष्ट्रीय मंचों पर 'विपक्षी एकता' का प्रलाप कर रहे थे, तो दूसरी ओर धरातल पर वे ममता बनर्जी की राजनैतिक जड़ों को खोदने में संलग्न थे। शिव सेना (यूबीटी) की नेता प्रियंका चतुर्वेदी का यह प्रेक्षण कि ₹ममता की सघन घेराबंदी के समय राहुल के कठोर स्वरों ने गठबंधन को आत्मघाती संकेत दिए,₹ गठबंधन की आंतरिक रुग्णता को उजागर करता है। जब परिणाम आए

और भाजपा ने 207 सीटों के साथ ऐतिहासिक विजय प्राप्त की, तब राहुल का अपने कार्यकर्ताओं को ममता की हार पर 'उत्सव' न मनाने का निर्देश देना केवल कूटनीतिक 'मगरमच्छ के आंसू' प्रतीत हुआ। ममता बनर्जी ने यद्यपि स्वयं को 'मुक्त पक्षी' बताकर गठबंधन को सुदृढ़ करने की औपचारिक प्रतिबद्धता दोहराई, किंतु उनके स्वर में छिपी कटुता यह प्रश्न खड़ा करती है कि क्या यह राष्ट्रीय प्रकल्प के प्रति समर्पण है या पराजय के पश्चात की सामरिक पुनर्संरचना?

वफादारी का अंतिम तिनका

इस बिखरते हुए कुनबे में यदि कोई एक द्विपक्षीय साझीदारी अभी भी कार्यात्मक प्रतीत होती है, तो वह राहुल और अखिलेश यादव की है। अप्रैल 2026 में रेवाड़ी की एक वैवाहिक सभा में अखिलेश का यह कहना कि ₹इंडी गठबंधन अटूट रहेगा और सीटों से अधिक महत्वपूर्ण 'चुनावी जीत' है,₹ उनके सामरिक यथार्थवाद का परिचायक था। 2024 के लोकसभा चुनावों में इस जुगलबंदी ने उत्तर प्रदेश में भाजपा के रथ को रोककर अपनी सार्थकता सिद्ध की थी।

राहुल गांधी के संवैधानिक संरक्षण और आरक्षण के विमर्श ने जिस प्रकार दलित समुदायों को प्रभावित किया, उसने समाजवादी पार्टी के पारंपरिक 'ओबीसी' आधार को एक नवीन सामाजिक ऊर्जा प्रदान की। वरिष्ठ विश्लेषक शरत प्रधान के अनुसार, अखिलेश भली-भांति समझते हैं कि कांग्रेस के बिना उस 'दलित-पिछड़ा' गठबंधन को पुनः निर्मित करना असंभव होगा। उनके लिए कांग्रेस के साथ विच्छेद 'राजनैतिक विनाश' का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। यही

कारण है कि वे समय-समय पर ममता और स्टालिन के साथ छायाचित्र साझा कर यह संदेश देते हैं कि ₹हम संकट के समय साथियों को नहीं त्यागते,₹ जो अप्रत्यक्ष रूप से कांग्रेस के लिए एक चेतावनी और वफादारी का प्रमाण पत्र दोनों है।

द्रविड़ दुर्ग का विखंडन और दक्षिण का विवर्तन

करूर की उस फोन कॉल ने जिस प्रक्रिया का सूत्रपात किया था, उसका चरमोत्कर्ष तमिलनाडु के चुनाव परिणामों में दृष्टिगोचर हुआ। कांग्रेस और द्रमुक के मध्य सीटों के बंटवारे को लेकर जो खींचतान प्रारंभ हुई थी, उसने अंततः एक अगाध अविश्वास को जन्म दिया। राहुल गांधी और स्टालिन की संयुक्त सभाओं का अभाव यह संकेत दे रहा था कि दोनों पक्ष एक-दूसरे के प्रति संशय में हैं।

इस वर्ष जब विजय की पार्टी 'टीवीके' सबसे बड़े दल के रूप में उभरी और स्टालिन को अपनी ही सीट पर पराजय का स्वाद चखना पड़ा, तो कांग्रेस ने क्षण भर का भी विलंब किए बिना 'टीवीके' सरकार को समर्थन देने की संभावनाएं टटोलनी प्रारंभ कर दीं। यह उस पुरातन वफादारी की अंत्येष्टि थी, जिसे स्टालिन ने 'भ्रातृत्व' के आवरण में सहेजा था। यह कूटनीतिक विवर्तन सिद्ध करता है कि 'इंडी' ब्लॉक में वफादारी की समाप्ति तिथि अब निकट है।

एक अघोषित अंत्येष्टि

विद्वान विश्लेषक रशीद किदवई का यह प्रेक्षण अत्यंत मार्मिक है कि 'गठबंधन अपने जन्म की घोषणा तो करते हैं, किंतु उनकी मृत्यु सदैव अघोषित होती है।' 'इंडी' ब्लॉक का अवसान भी किसी अधिकारिक विज्ञप्ति से नहीं, बल्कि इन विखंडित वफादारियों और सामरिक धोखेबाजियों के माध्यम से हो रहा है। जनता दल (यूनाइटेड) के नीतीश कुमार का पलायन और पुनः एनडीए में विलीनीकरण इस प्रक्रिया का प्रथम चरण था, जो अब दक्षिण और पूर्व के राज्यों तक विस्तृत हो चुका है।

यदि भारतीय जनता पार्टी ने निर्वाचन जीतने की कला को सिद्ध कर लिया है, तो प्रतिपक्ष अभी भी एक निर्वाचन लड़ने हेतु 'एकजुट' रहने की कला सीखने में विफल रहा है। महत्वाकांक्षाओं के इस कुरुक्षेत्र में 'इंडी' ब्लॉक अब एक राजनैतिक अधि-वृतांत कम और एक ऐतिहासिक अवशेष अधिक प्रतीत होता है। ❍❍❍

वैभव सूर्यवंशी

आधुनिक क्रिकेट का नवीन शास्त्र

सत्य सदैव टीम

इतिहास के पन्नों पर जब भी किसी युग के विवर्तन के संकेत अंकित किए जाते हैं, तो वे अक्सर किसी असाधारण व्यक्तित्व की पदचाप के साथ प्रस्फुटित होते हैं। भारतीय क्रिकेट के क्षितिज पर वर्तमान में एक ऐसा ही नाम दैदीप्यमान है, जिसने आयु की सीमाओं को झुठलाकर कौशल के नवीन प्रतिमान गढ़ दिए हैं। 15 वर्षीय वैभव सूर्यवंशी केवल एक खिलाड़ी नहीं हैं, वे उस डिजिटल और हाइपर-एग्रेसिवयुग का अधि-वृतांत हैं, जहां रक्षात्मक जड़ता के लिए कोई स्थान शेष नहीं है। वैभव का उदय क्रिकेट के उस पारंपरकि व्याकरण की अंत्येष्टि है, जो कभी विकेट बचाने को ही सर्वोच्च धर्म मानती थी।

मनोवैज्ञानिक द्वंद्व का चरमोत्कर्ष

22 अप्रैल 2026 की वह संध्या लखनऊ के इकाना स्टेडियम में एक विचित्र तनाव से भरी थी। राजस्थान रॉयल्स और लखनऊ सुपर जायंट्स के मध्य छिड़ा यह संघर्ष केवल अंकतालिका का गणित नहीं था, बल्कि यह एक किशोर की मानसिक दृढ़ता का परीक्षण था। मोहसिन खान ने चौथे ओवरका प्रारंभ किया—एक ऐसी मोर्चाबंदी जो बाएं हाथ के इस नूतन बल्लेबाज को जकड़ने के लिए रची गई थी। प्रथम गेंद—पराजित होकर ऑफ साइडपर रुकी। द्वितीय—एक विरल रक्षात्मक प्रहार। तृतीय—लक्ष्य पर प्रहार, किंतु मिडविकेट के प्रहरी के हाथों में। चतुर्थ और पंचम गेंदें भी केवल रिक्तता और संशय की प्रतिध्वनि मात्र थीं।

पांच गेंदे, पांच 'डॉट'। विश्व क्रिकेट के सर्वाधिक विध्वंसक बल्लेबाज के सम्मुख यह सन्नाटा अस्वाभाविक था। मोहसिन ने परिस्थिति का सूक्ष्म आकलन किया और षष्ठम गेंद के रूप में उस 'लालच' को प्रेषित किया, जिसे वैभव ठुकरा न सके। गेंद ने सामान्य से अधिक उछाल प्राप्त किया और वैभव का वह प्रचंड प्रहार आकाश की शून्यता को चीरता हुआ अंततः एक सुरक्षित हाथों में समा गया।

यहाँ प्रश्न उस त्रुटि का नहीं है, बल्कि उस डीएनए का है जो एक पूर्ण ओवर को बिना किसी रन के व्यतीत करने की अनुमति नहीं देता। वैभव के लिए मेडेन खेलना किसी विधिक पराजय से कम नहीं था। जहां पारंपरकि बल्लेबाज समय की प्रतीक्षा करते हैं, वैभव वहां उस अधीरताके प्रतीक हैं जो आधुनिकता की अनिवार्य शर्त है। यह किसी किशोर की चंचलता नहीं, बल्कि एक पूर्णतः निर्मित बल्लेबाजी मस्तिष्क का वह स्वरूप है जो स्कोर

करने को ही अस्तित्व का प्रमाण मानता है।

विपरीत क्रम का सृजन

क्रिकेट की पारंपरिक पाठशालाओं में सर्वप्रथम रक्षा के स्तंभ निर्मित किए जाते हैं, ताकि विकेट की शुचिता बनी रहे। किंतु वैभव सूर्यवंशी का सृजन इस क्रम के विलोम में हुआ है। क्रीज पर खड़े वैभव की नैसर्गिक स्थिति केवल एक ही है—गेंद को सीमा रेखा के पार सिक्सके लिए भेजना। यदि वह संभव न हो, तो वे फोरस्वीकार करते हैं, और अंततः डबल पर विचार करते हैं। उनके लिए प्रत्येक गेंद एक अवसर है, कोई चुनौती नहीं।

वैभव उस कालखंड की उपज हैं जब 27 मार्च 2011 को भारत अपने घरेलू मैदान पर 50 ओवरों के विश्व कप की विजय की देहरी पर खड़ा था। उन्होंने अपनी प्रथम श्वास उस संसार में ली जहां टी-20 क्रिकेट का सर्वाधिक देखा जाने वाला स्वरूप था और टेस्ट क्रिकेट केवल एक दुरूह शिखर। उनके लिए तीव्र गति से रन अर्जित करना ही एकमात्र विश्वसनीय मुद्रा है।

ताजपुर की माटी और पिता का स्वप्न

वैभव की गाथा पटना के उत्तर-पूर्व में स्थित ताजपुर गांव की जलोढ़ मिट्टी से प्रारंभ होती है। खेतों की हरियाली और सघन वृक्षों वाली संकरी गलियों के मध्य यह गांव किसी भी अन्य भारतीय कस्बे जैसा ही साधारण है, किंतु यहां की वायु में क्रिकेट के वे बीज बोये गए जो कालांतर में एक वटवृक्ष बने। वैभव के पिता, संजीव, जो आभूषण उद्योग और कृषि से जुड़े हैं, स्वयं कभी क्रिकेट की लहरों पर सवारी करने मुंबई (मुंबई) के तटों पर गए थे। जब उनके स्वयं के स्वप्न कूटनीति और समय के अभाव में विलीन हो गए, तो उन्होंने अपनी उस संचित ऊर्जा को अपने पुत्र वैभव के भीतर संचरित कर दिया।

संजीव की साधना का वह दृश्य अत्यंत सिनेमैटिक है—अपनी स्कोर्पियो कार में वैभव, नेट गेंदबाजों और एक पूरी वाहिनी के लिए भोजन लादकर ताजपुर से पटना तक का तीन घंटे का वह कठिन मार्ग तय करना। वहां मनीष कुमार ओझा की जेन नेक्स्ट क्रिकेट एकेडमीके अधीन वैभव ने वह तपस्या प्रारंभ की, जिसने गेंदबाजों के लिए संत्रास उत्पन्न कर दिया। ओझा के अनुसार, जहां एक सामान्य प्रतिभाशाली बालक प्रतिदिन 200 गेंदें खेलता है, वहीं वैभव ने 600 गेंदों के प्रहार का वह 'क्रूर' अभ्यास किया जो किसी भी अन्य खिलाड़ी के लिए एक दंड जैसा प्रतीत होता।

वैभव ने कभी अपनी डिफेंसको परिष्कृत करने का प्रयास नहीं किया। उनका ध्येय सदैव उन स्कोअरिंगशॉट्स को सिद्ध करना था जो किसी भी अंतराल से सीमा रेखा खोज सकें। पिता संजीव ने इस बौद्धिक निवेशके लिए अपनी पैतृक संपत्ति और भूमि तक का परित्याग कर दिया। ₹वह अब केवल मेरा पुत्र नहीं, अपितु समूचे बिहार का सुपुत्र है,₹ संजीव के ये शब्द उस त्याग की पराकाष्ठा हैं जिसने इस किशोर चक्रवात को जन्म दिया।

12 से 15 का जादुई सफर

वैभव सूर्यवंशी की यात्रा का कालक्रम किसी परीकथा जैसा प्रतीत होता है। 12 वर्ष की अल्पायु में बिहार के लिए रणजी ट्रॉफी का डेब्यूकरना, 13 वर्ष की आयु में राजस्थान रॉयल्स द्वारा 1.1 करोड़ की भारी राशि में अधिग्रहित किया जाना, और 14 वर्ष की आयु में गुजरात टाइटन्स के विरुद्ध मात्र 35 गेंदों में शतक जड़कर आईपीएल के इतिहास का सबसे युवा और दूसरा तीव्रतम शतकवीर बनना—ये घटनाएं सामान्य मानवीय सामर्थ्य से परे हैं।

राजस्थान रॉयल्स के रणनीतिकार जुबिन भरूचा ने जब वैभव का प्रथम परीक्षण लिया, तो वे स्तब्ध रह गए। 155 किलोमीटर प्रति घंटे से अधिक की गति वाले साइडआर्म विशेषज्ञों की गेंदों को जिस सहजता से वैभव ने साइटस्क्रीनके पार विसर्जित किया, उसने यह प्रमाणित कर दिया कि यह प्रतिभा असामान्यहै। सांख्यिकी यह सिद्ध करती है कि वैभव किसी विशिष्ट लेंथ या लाइन के मोहताज नहीं हैं,उनके तरकश में प्रत्येक गेंद के लिए एक आक्रामक प्रत्युत्तर है।

पारंपरिक मैनुअल का उल्लंघन

वैभव का बल्लेबाजी शास्त्र कोचिंग मैनुअल के स्थापित सिद्धांतों को चुनौती देता है। जहां अधिकांश आक्रमणकारी बल्लेबाज फ्रंट फुट पर भार डालते हैं, वैभव बैक फुट पर लदे रहकर अपनी सामर्थ्य संचित करते हैं। भरूचा के अनुसार, वे सदैव एक ऐसी स्थिति में सेट होते हैं जहां से वे किसी भी गेंद को सिक्स के लिए भेज सकें।

उनकी बल्लेबाजी शैली में ब्रायन लारा का वह ऊँचा बैक लिफ्टऔर गैरफील्ड सोबर्स की वह शारीरिक लचक और फिनिशस्पष्ट दिखाई देती है। मार्क बुचर जैसे विशेषज्ञों का मानना है कि वैभव की देहयष्टि और शॉट पूर्ण करने का वह वृत्ताकार ढंग सोबर्स की उस ऐतिहासिक भव्यता का स्मरण कराता है जो अब लुप्तप्राय मानी जाती थी। वैभव के पास वह मसल मेमोरी है जो 15 वर्ष की आयु में असंभव मानी जाती है; वे गेंद को चेतना से पूर्व ही अपनी इंद्रियों से पढ़ लेते हैं।

तेंदुलकर बनाम सूर्यवंशी

वैभव की इस तीव्र प्रगति ने अनिवार्य रूप से सचिन तेंदुलकर के साथ उनकी तुलना को जन्म दिया है। किंतु, एक सूक्ष्म दृष्टि यह प्रकट करती है कि दोनों के मध्य एक आधारभूत भिन्नता है। तेंदुलकर का खेल विकेट न खोने की उस पारंपरकि दृढ़ता पर टिका था जो एक 'संरक्षक' की भूमिका थी। इसके विपरीत, वैभव एक 'आक्रामक' योद्धा हैं, जो अपने साथियों की रक्षा करने के बजाय शत्रुओं का विनाश करने में विश्वास रखते हैं। तेंदुलकर एक प्रतिज्ञा थे, वैभव एक प्रहार हैं।

भविष्य की चुनौतियां और डी विलियर्स का संशय

वैभव की सफलता का मार्ग यद्यपि आलोकित है, किंतु दक्षिण अफ्रीकी दिग्गज ए.बी. डी विलियर्स ने एक महत्वपूर्ण सामरिक चिंता व्यक्त की है। उनका तर्क है कि टी-20 की सफलता के पश्चात क्या वैभव टेस्ट क्रिकेट की उस मनोवैज्ञानिक और शारीरिक सड़न को सहन कर पाएंगे जहां परिस्थितियां हर पल बदलती हैं? ऑस्ट्रेलिया की उग्र उछाल और इंग्लैंड की स्विंग होती गेंदों के सम्मुख वैभव का यह 'अटैकिंग' मॉडल किस सीमा तक सफल होगा, यही उनके 'ग्रेटनेस' (ग्रेटनेस) का अंतिम मापदंड होगा।

भारतीय क्रिकेट टीम की वर्तमान संरचना में प्रवेश पाना किसी हिमालयी चढ़ाई से कम नहीं है, विशेषकर एक बल्लेबाज के लिए। किंतु वैभव सूर्यवंशी उन नियमों के अधीन नहीं हैं जो सामान्य खिलाड़ियों पर लागू होते हैं। उनके लिए किसी को विस्थापित करने का प्रश्न गौण है; उनके लिए स्थान 'निर्मित' किया जाना अनिवार्य है। विशेषज्ञों से लेकर साधारण दर्शकों तक, प्रत्येक की दृष्टि में वैभव अब 'सन्नद्ध' हैं।

क्रिकेट को एक ऐसे नायक की आवश्यकता थी जो देखने के नजरिए को ही रीबूट कर सके। वैभव सूर्यवंशी वह सामरिक वाहन हैं जो प्रशंसकों को उस अज्ञात प्रदेश की ओर ले जाएंगे जहां अब तक कोई नहीं पहुंचा है। वैभव का कैनवास अब समूचा विश्व है। वे उस सूर्य की भांति उदित हुए हैं, जिसकी प्रखरता ने भविष्य के क्रिकेट की इबारत लिखनी प्रारंभ कर दी है।

○○○

सत्य सदैव
से जुड़ें

विचारों का सच्चा संगम

सत्य सदैव वह मंच है जहां विविध दृष्टिकोण, अनुभव और विचार एक साथ मिलते हैं। यह उन जिज्ञासु और जागरूक पाठकों का मंच है जो अपने समय के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्नों को गहराई से समझना चाहते हैं। हमारा प्रयास केवल समाचार देना नहीं, बल्कि विचारों का ऐसा संवाद स्थापित करना है जहां मतभेद के बावजूद सार्थक चर्चा हो सके। सत्य सदैव अपने पाठकों को एक ऐसा बौद्धिक मंच प्रदान करता है जहां खुली सोच, तर्कपूर्ण विमर्श और परस्पर सम्मान के साथ हम अपने समाज और दुनिया को समझने की दिशा में आगे बढ़ते हैं।

सत्य सदैव को सब्सक्राइब करें
और बनें उस समुदाय का हिस्सा जो सत्य, संवाद और विचार की शक्ति में विश्वास रखता है।

केवल ₹20 प्रति अंक

अभी ऑर्डर करें: satyasadev.com

satyasadev.com का असीमित एक्सेस	विज्ञापन-मुक्त साइट ब्राउज़ करें	विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफार्म्स पर उपलब्ध	शीघ्र ही YouTube पर भी होगी हमारी मौजूदगी

सब्सक्रिप्शन का वार्षिक ₹300। यह ऑफर केवल नए सब्सक्राइबर्स के लिए है।

श्रीराजेश

3F का भूचाल

तेल की बढ़ती कीमतों, उर्वरक संकट और डॉलर के वैश्विक वर्चस्व के बीच भारत एक ऐसे आर्थिक चौराहे पर खड़ा है, जहां विकास और संप्रभुता दोनों की परीक्षा हो रही है। '3F'- ईंधन, उर्वरक और विदेशी मुद्रा- का यह त्रिकोण केवल आर्थिक चुनौती नहीं, बल्कि उस भू-राजनीतिक भूचाल का संकेत है, जिसने भारतीय मध्यम वर्ग, किसानों और नीति-निर्माताओं—सभी को असुरक्षा के एक नए युग में धकेल दिया है।

मई की तपती दोपहरी में राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली के एक व्यस्त पेट्रोल पंप पर वातावरण में व्याप्त पेट्रोलकी तीक्ष्ण गंध अब केवल एक गंध नहीं, बल्कि एक कड़वे यथार्थ की आहट बन चुकी है। पंप पर लगी डिजिटल स्क्रीन के अंक किसी प्रलयंकारी काल-गणनाकी भांति इतनी तीव्र गति से बदल रहे हैं कि वहां खड़ा उपभोक्ता जड़वत खड़ा रह जाता है। इस कतार में खड़े उस मध्यमवर्गीय व्यक्ति के लिए, जो अपनी पुरानी मोटर-साइकिल की टंकी भरवा रहा है, वे अंक केवल पेट्रोल का मूल्य नहीं हैं। वे अंक उसके घर के बजट में होने वाले उस विवर्तन का साक्ष्य हैं, जो उसके बच्चों की स्कूल बस के बढ़ते शुल्क, रसोई की महंगी होती दालों और उसकी उन छोटी-छोटी खुशियों की अंत्येष्टि की घोषणा कर रहे हैं, जिन्हें उसने वर्षों की बचत से संजोया था। उसकी आंखों में व्याप्त शून्यता उस 'इकोनॉमिक एंग्जायटी' का जीवंत प्रतिबिंब है, जो आज भारत के करोड़ों दीवानखानों में मौन पसरी हुई है।

इसी समय, लगभग दो हजार मील दूर, आंध्र प्रदेश के गोदावरी डेल्टा के उर्वर खेतों में एक भिन्न किंतु उतनी ही विद्रूप विभीषिका आकार ले रही है। साठ वर्षीय कृषक सुब्बा राव अपनी भूमि पर खड़े होकर यूरिया के रिक्त बोरे को एक मृत सैनिक के शव की भांति निहार रहे हैं। उनके लिए अब मानसून की अनिश्चितता सबसे बड़ा संकट नहीं रही,उनका वास्तविक शत्रु अब वह 'गैस-प्राइस' है जो सात समंदर पार ब्रसेल्स या वाशिंगटन के बंद कमरों में तय होती है। खाद की बोरियों पर बढ़ते दामों के स्टीकरउनके लिए ऋण के उस दलदल का निमंत्रण हैं, जहां से निकलने का मार्ग तक बंद हो चुका है।

इन दोनों दृश्यों के नेपथ्य में, मुंबई के मिंट रोड स्थित भारतीय रिजर्व बैंक के गगनचुंबी भवन के भीतर एक सन्नाटा पसरा है। वहां के रणनीतिकार और अर्थशास्त्री 'डॉलर इंडेक्स' के चढ़ते ग्राफको किसी शत्रु सेना की पदचाप की भांति देख रहे हैं। विदेशी मुद्रा भंडार की तिजोरी, जो कभी अभेद्य प्रतीत होती थी, आज 'डॉलर के शस्त्रीकरण'

और वैश्विक पूंजी के पलायन से जूझ रही है। यह सन्नाटा उस 'आर्थिक कुरुक्षेत्र' की प्रस्तावना है, जिसे वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने एक छोटे किंतु अत्यंत प्रहारक संक्षिप्त नाम में पिरोया है— '3F' (ईंधन, उर्वरक और विदेशी मुद्रा)। यह केवल एक आर्थिक शब्दावली नहीं है,यह वह भूचाल है जिसकी तरंगें भारत की आर्थिक संप्रभुता की नींव को झकझोर रही हैं। वित्त मंत्री का यह स्वीकारोक्ति कि भारत '3F' के दबाव में है, राष्ट्र के लिए एक सामरिक अलार्मकी भांति है, जो यह उद्घोष कर रहा है कि आत्मनिर्भरता का स्वप्न अब एक कठिन और रक्तरंजित परीक्षा की देहरी पर खड़ा है।

वैश्वीकरण की अंत्येष्टि और विखंडन का अभ्युदय

इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक का यह मध्य कालखंड इतिहास के उन पृष्ठों में स्वर्ण अक्षरों के बजाय बारूद की कालिख से अंकित होगा। 'वैश्वीकरण 2.0' का वह सुहाना और लुभावना स्वप्न—जहां सीमाओं का कोई महत्व नहीं था और व्यापार को शांति का दूत माना जाता था—अंततः 'विखंडन के युग' में विलीन हो चुका है। विश्व अब परस्पर सहयोग की उस बिसात से हट चुका है जहां 'विन-विन' की कूटनीति चलती थी।अब हम उस डरावने यथार्थ में लौट चुके हैं जहां 'संसाधन-राष्ट्रवाद' का कबीलाई संघर्ष ही सर्वोपरि है।

भारत, जो अपनी विकास यात्रा में वैश्विक आपूर्ति-श्रृंखलाका एक अनिवार्य हिस्सा बनने की छटपटाहट में था, आज उसी तंत्र के 'एक्सटर्नल शॉक्स' से सर्वाधिक असुरक्षित खड़ा है। इसका मुख्य कारण यह है कि विश्व अर्थव्यवस्था अब अर्थशास्त्र के नियमों से नहीं, बल्कि सामरिक सनकसे निर्देशित हो रही है। हम एक ऐसे दौर में हैं जहां एक मिसाइल का प्रहार किसी केंद्रीय बैंक की मौद्रिक नीति से अधिक प्रभावी सिद्ध हो रहा है।

पश्चिम एशिया बना एक धधकता हुआ सामरिक ज्वालामुखी

इस वैश्विक विभीषिका के केंद्र में पश्चिम एशिया का वह ज्वालामुखी है, जो अब धधकते हुए लावे में परिवर्तित होकर समूचे दक्षिण एशिया की ऊर्जा सुरक्षा को निगलने को आतुर है। ईरान और इजराइल के मध्य छिड़ा वह छद्म युद्ध, जिसे वर्षों तक परछाइयों का युद्ध कहा जाता रहा, अब सीधे और नग्न टकराव की स्थिति में है। 'हॉर्मुज जलडमरूमध्य'—विश्व की वह सामरिक नस, जिससे वैश्विक तेल का लगभग पांचवां हिस्सा प्रवाहित होता है—आज तेहरान के रडार और वाशिंगटन के विमानवाहक पोतों के मध्य एक कुरुक्षेत्र बन चुका है।

तेहरान की ओर से आने वाली प्रत्येक धमकी और इजराइल व अमेरिका का प्रत्येक जवाबी प्रहार भारत की विकास दर के लिए एक 'कार्डियक अरेस्ट' के समान है। जब एक तेल टैंकर पर ड्रोन हमला होता है, तो उसका प्रभाव केवल बीमा की बढ़ती दरोंतक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह भारत के परिवहन तंत्र, रसद और अंततः आम आदमी की थाली में रखी रोटी की कीमत तय करता है। ऊर्जा की इस रसद में पड़ने वाली प्रत्येक बाधा सीधे तौर पर भारत के 'ग्रोथ इंजन' में रेत डालने का कार्य कर रही है। भारत राजनैतिक रूप से भले ही एक अखंड और स्थिर लोकतंत्र हो, किंतु सामरिक रूप से वह ऊर्जा की दृष्टि से अत्यंत भंगुरखड़ा है।

रूस-यूक्रेन संघर्ष और मृदा का मरुस्थलीकरण

रूस-यूक्रेन संघर्ष, जिसे प्रारंभ में एक क्षेत्रीय विवाद माना गया था, उसकी लंबी खिंचती परछाइयों ने वैश्विक कृषि-नीति को सदैव के लिए परिवर्तित कर दिया है। यह केवल गेहूं की आपूर्ति का प्रश्न नहीं रह गया है बल्कियह उस 'नाइट्रोजन' और 'पोटाश' का संकट बन गया है जिसने वैश्विक मृदा की उर्वरता को बंधक बना लिया है। बेलारूस और रूस, जो वैश्विक उर्वरक कार्टेल के अघोषित स्वामी थे, आज प्रतिबंधों की मार और अपनी सामरिक अनिवार्यताओं के कारण आपूर्ति के मार्ग अवरुद्ध किए बैठे हैं।

चीन ने इस अवसर को पहचानते हुए अपने यूरिया और फॉस्फेट निर्यात पर जो प्रतिबंध लगाए हैं, वे किसी भी सैन्य घेराबंदी से कम नहीं हैं। भारत जैसे देश के लिए, जहां कृषि केवल एक व्यवसाय नहीं बल्कि एक सामाजिक सुरक्षा कवचहै, वहां उर्वरकों की कमी का अर्थ है—ग्रामीण असंतोष की ज्वाला। उर्वरक का यह संकट सिद्ध करता है कि 21वीं सदी में युद्ध केवल सीमाओं पर नहीं, बल्कि खेतों की उन परतों के नीचे भी लड़े जा रहे हैं जहां अनाज उगता है।

डॉलर का शस्त्रीकरण एवम् डिजिटल प्रतिशोध

किंतु '3F' के इस त्रिकोण में जो सबसे प्रलयंकारी और सूक्ष्म विवर्तन है, वह 'विदेशी मुद्रा' और डॉलर के वर्चस्व को गिरते हुए देखा जा रहा है। संयुक्त राज्य अमेरिका ने जिस प्रकार डॉलर को एक सामरिक शस्त्र की भांति प्रयुक्त किया, उसने वैश्विक वित्त

की नैतिकता को ही समाप्त कर दिया। आज ब्रिक्स देशों के भीतर 'डी-डॉलराइजेशन' की जो चर्चाएं कभी अकादमिक और कल्पनाशील मानी जाती थीं, वे आज 'युआन-डिप्लोमेसी' और 'गोल्ड-रिजर्व' के रूप में एक निष्ठुर यथार्थ बनकर उभर रही हैं।

रूस और चीन के बीच होता द्विपक्षीय व्यापार अब डॉलर को दरकिनार कर रहा है। ऐसे में भारत एक ऐसी कूटनीतिक दुविधा में है जहां उसे वाशिंगटन के साथ अपनी साझीदारी को भी सहेजना है और साथ ही अपनी मुद्रा (रुपया) को उस चक्रवात से भी बचाना है जो अमेरिकी ट्रेजरीसे उठ रहा है। भारतीय रिजर्व बैंक के पास मौजूद विदेशी मुद्रा का सुरक्षा कवच यद्यपि सुदृढ़ है, किंतु 'हॉट मनी' का निरंतर निर्गमन और व्यापार घाटे की बढ़ती चौड़ाई उस कवच में बारीक दरारें डाल रही है।

तूफान के बीच एक महत्वाकांक्षी नौका

इस संपूर्ण वैश्विक कोलाहल के बीच भारत एक ऐसी महत्वाकांक्षी नौका की भांति है, जिसे एक साथ तीन दिशाओं से आने वाले तूफानों का सामना करना है। हमारी समस्या यह नहीं है कि हम विकसित होना नहीं जानते ।हमारी चुनौती यह है कि हमारे विकास के मुख्य अवयव—तेल और कच्चा माल—उन गलियारों से आते हैं जो आज बारूद की गंध से भरे हुए हैं।

आज का कड़वा यथार्थ यही है कि भारत अब बाहरी झटकों से स्वयं को 'इंसुलेट' नहीं रख सकता। यदि तेहरान और तेल अवीव के बीच तनाव की एक चिंगारी भी फूटती है, तो उसका सीधा असर भारत के चालू खाता घाटे पर पड़ता है। यदि मास्को और कीव के बीच संवाद की खिड़की बंद होती है, तो भारतीय किसान के पास खाद का बोरा पहुंचने की संभावना क्षीण हो जाती है। और यदि न्यूयॉर्क के फेडरल रिजर्व में ब्याज दरें बदलती हैं, तो भारतीय रुपया अपनी साख खोने के डर से कांपने लगता है।

यह '3F' संकट भारत की उस 'स्ट्रेटेजिक ऑटोनॉमी' के लिए एक निर्णायक आह्वान है, जिसे हमने दशकों से अपनी विदेश नीति का आधार बनाया है। इस साल का खास कर यह मई का महीना हमें यह स्मरण करा रहा है कि एक राष्ट्र के रूप में हम तब तक वास्तव में स्वतंत्र नहीं हैं, जब तक कि हमारी ऊर्जा और खाद्य सुरक्षा का स्विच किसी अन्य राजधानी के हाथ में है।

सामरिक महाधमनी व आयात का पाश

कच्चा तेल—आधुनिक सभ्यता की वह काली और सघन महाधमनी है, जिसके स्पंदन पर राष्ट्रों का उत्थान और पतन टिका होता है। 21वीं सदी के तीसरे दशक में जब भारत स्वयं को एक वैश्विक विनिर्माण केंद्र और पांच ट्रिलियन डॉलर की अर्थव्यवस्था के रूप में प्रतिष्ठित करने का स्वप्न देख रहा है, तब इस स्वप्न की सबसे कमजोर कड़ी उसकी 'एनर्जी फ्रैजिलिटी' यानी ऊर्जा-भंगुरता है। यथार्थ की धरातल पर कड़वा सत्य यह है कि भारत अपनी कच्चे तेल की कुल आवश्यकता का लगभग 85 प्रतिशत हिस्सा सुदूर देशों से आयात करता है। यह आंकड़ा केवल एक आर्थिक डेटा नहीं है,यह वह अदृश्य जंजीर है, जिसका सिरा उन शक्तियों के हाथों में है, जिनके हित अक्सर नई दिल्ली के सामरिक लक्ष्यों से टकराते हैं।

भारत की विकास दर अब केवल रायसीना हिल्स की फाइलों या नॉर्थ ब्लॉक की नीतियों से निर्धारित नहीं होती ।वह अब 'हॉर्मुज जलडमरूमध्य' की लहरों की स्थिरता से बंधी हुई है। यह संकरा समुद्री मार्ग भारत की आर्थिक संप्रभुता का वह 'चोक-पॉइंट' है, जहां से हमारे कुल तेल आयात का लगभग आधा हिस्सा गुजरता है। इस अनिश्चित कालखंड में, जब ईरान और इजराइल की मिसाइलें एक-दूसरे के आकाश को बींधती रही हैं और पुनः यह भयावह दृश्य दोहराया जा सकता है,तब भारत की ऊर्जा सुरक्षा किसी ताश के पत्तों से बने महल की भांति प्रतीत होती है। एक तेल टैंकर पर हुआ एक प्रहार भारत के शेयर बाजार में सुनामी लाने और करोड़ों परिवारों की रसोई को ठंडा करने के लिए पर्याप्त है।

केवल ईंधन नहीं, महंगाई का चक्रवात

तेल की राजनीति केवल वाहनों की टंकी तक सीमित नहीं रहती,यह उस 'लॉजिस्टिक्स' और परिवहन तंत्र की आत्मा है, जिस पर समूचा राष्ट्र खड़ा है। जब अंतरराष्ट्रीय बाजार में कच्चे तेल की कीमतें $110 प्रति बैरल की मनोवैज्ञानिक सीमा को पार करती हैं, तो उसका प्रभाव एक 'चेन-रिएक्शन' की भांति समूचे आर्थिक ढांचे को झकझोर देता है। भारत में रसद की लागत पहले से ही वैश्विक मानकों की तुलना में उच्च है, और डीजल की कीमतों में होने वाली प्रत्येक वृद्धि इस बोझ को असहनीय बना देती है।

परिवहन महंगा होने का सीधा अर्थ है—सब्जियों, अनाजों और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कीमतों में बेलगाम

वृद्धि। इस प्रकार, तेल की कीमतें सीधे तौर पर भारत के 'कंज्यूमर प्राइस इंडेक्स' को एक प्रलयंकारी दिशा में धकेल देती हैं। यह केवल मध्यवर्ग की मोटर-साइकिल का प्रश्न नहीं है,यह उस निर्धन व्यक्ति की थाली का प्रश्न है, जिसका भोजन मालवाहक ट्रकों के पहियों पर चढ़कर उस तक पहुंचता है। उड्डयन क्षेत्र से लेकर बिजली उत्पादन तक, तेल की यह 'डॉलर-आधारित' जकड़न भारत को एक स्थायी 'इम्पोर्टेड इन्फ्लेशन' यानी आयातित मुद्रास्फीति के चक्रवात में फंसाए रखती है।

पेट्रोल का राजनैतिक अर्थशास्त्र

भारत में ईंधन की कीमतों का एक जटिल 'पॉलिटिकल इकोनॉमी' है। केंद्र और राज्य सरकारों के लिए पेट्रोल और डीजल केवल ईंधन नहीं, बल्कि 'राजस्व के कामधेनु' हैं। उत्पाद शुल्क और अन्य कर का जो ढांचा पिछले वर्षों में निर्मित किया गया है, उसने सरकारों को एक ऐसी 'फिस्कल एडिक्शन' यानी वित्तीय व्यसन का शिकार बना दिया है, जिससे बाहर निकलना अब राजनैतिक रूप से आत्मघाती प्रतीत होता है।

जब वैश्विक कीमतें बढ़ती हैं, तो तेल विपणन कंपनियों के घाटे बढ़ने लगते हैं, जिससे बैंकों के बहीखातों पर दबाव पड़ता है। यदि सरकार टैक्सकम करती है, तो कल्याणकारी योजनाओं के लिए धन का अभाव हो जाता है। और यदि कीमतें बढ़ती हैं, तो जन-आक्रोश का दावानल सुलगने लगता है। मई की तपिश इसी राजनैतिक दुविधा को और गहरा कर रही है। भारत एक ऐसे दोराहे पर खड़ा है जहां उसे 'राजस्व की सुरक्षा' और 'जनता की सामर्थ्य' के बीच एक अत्यंत बारीक धागे पर संतुलन बनाना है।

इलेक्ट्रिक व्हीकल का मिथक बनाम धरातल का यथार्थ

तेल की इस दासता से मुक्ति के रूप में 'इलेक्ट्रिक व्हीकल्स' का विमर्श बहुत धूमधाम से प्रस्तुत किया गया। 'ग्रीन एनर्जी' और 'नेट-जीरो' के नारों ने एक ऐसा तिलिस्म निर्मित किया मानो हम रातों-रात तेल के युग को पीछे छोड़ देंगे। किंतु, यथार्थ की परतें उधेड़ने पर एक भिन्न ही विद्रूपता सामने आती है। तेल की निर्भरता को कम करने का अर्थ है—लिथियम, कोबाल्टऔर रेयर अर्थ एलिमेंट्स की एक नई निर्भरता को स्वीकार करना।

विडंबना यह है कि इन खनिजों की वैश्विक आपूर्ति-श्रृंखला पर चीन का लगभग एकाधिकार है। इस प्रकार, तेल से मुक्ति का मार्ग हमें एक अन्य सामरिक दासता की ओर ले जा रहा है। भारत के पास फिलहाल लिथियम के शोधन और बैटरी निर्माण का वह सुदृढ़ ढांचा नहीं है जो उसे आत्मनिर्भर बना सके। इसके अतिरिक्त, चार्जिंग इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी और बिजली उत्पादन के लिए अभी भी कोयले पर अत्यधिक निर्भरता यह सिद्ध करती है कि 'ईवी' क्रांति फिलहाल एक 'अर्बन एलीट' प्रयोग से अधिक कुछ नहीं है। जब तक हमारी ऊर्जा की मूल मांग जीवाश्म ईंधन से पूरी होगी, तब तक 'स्वच्छ ऊर्जा' का स्वप्न केवल कागजी विलास ही बना रहेगा।

सामरिक तेल भंडार

किसी भी राष्ट्र की संप्रभुता उसकी संकट सहने की क्षमता से आंकी जाती है। भारत ने यद्यपि पादुर, विशाखापत्तनम और मंगलौर में अपने 'स्ट्रेटेजिक पेट्रोलियम रिजर्व' निर्मित किए हैं, किंतु क्या ये एक पूर्णकालिक युद्ध या हॉर्मुज की पूर्ण घेराबंदी की स्थिति में पर्याप्त हैं? वर्तमान में हमारे ये भंडार देश की लगभग 45दिनों की तेल आवश्यकता को ही पूरा कर सकते हैं। यदि इसमें रिफाइनरियों के पास मौजूद स्टॉक को भी जोड़ दिया जाए, तो भारत अधिकतम 60-70 दिनों तक ही अपनी सांसें बचा सकता है। हालांकि कि हाल ही में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की यूएई की यात्रा के दौरान यूएई भारत 'स्ट्रेटेजिक पेट्रोलियम रिजर्व'बनायेगा, इस संबंध में करार हुआ है। यह भविष्य में ऑक्सीजन तो दे सकता है लेकिन वर्तमान संकट का तात्कालिक समाधान फिलहाल प्राथमिकता है।

यह सुरक्षा कवच चीन या अमेरिका जैसे राष्ट्रों की तुलना में अत्यंत क्षीण है, जिनके पास कई महीनों का भंडार सुरक्षित है। तेल भंडारों का विस्तार करने की योजनाएं यद्यपि फाइलों में विद्यमान हैं, किंतु उच्च कीमतों के इस दौर में उन भंडारों को भरना एक वित्तीय दु:स्वप्न बन चुका है। सामरिक दूरदर्शिता की मांग है कि हम इन भंडारों को 'ऊर्जा बीमा' की भांति देखें, न कि केवल एक गोदाम की भांति।

ऊर्जा-सुरक्षा का नया व्याकरण

दरअसल, यह विश्लेषण हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचाता है कि भारत राजनैतिक रूप से भले ही एक सशक्त राष्ट्र हो, किंतु ऊर्जा की दृष्टि से वह अभी भी 'नर्सरी' में खड़ा है। 'पहला F - Fuel' का यह दबाव सिद्ध करता है कि हमारी विकास दर अब वाशिंगटन, मास्को और तेहरान के त्रिकोणीय संघर्ष की बंधक है।

"भारत की विकास दर अब केवल दिल्ली की नीतियों से नहीं, बल्कि होर्मुज जलडमरूमध्य की स्थिरता से भी तय होगी।" यह वाक्य केवल एक विश्लेषण नहीं, बल्कि एक चेतावनी है। जब तक भारत अपनी ऊर्जा की पिटारे में परमाणु ऊर्जा, हरित हाइड्रोजन और घरेलू अन्वेषण को

उर्वरक सब्सिडी का विस्फोट

यूरिया के उत्पादन में प्राकृतिक गैस केवल एक ईंधन नहीं, बल्कि मुख्य कच्चा माल है। वैश्विक बाजार में जब भी प्राकृतिक गैस की कीमतों में स्पाइक आता है, तो उसकी सीधी परिणति भारतीय उर्वरक कारखानों की उत्पादन लागत में वृद्धि के रूप में होती है। चूंकि भारत अपनी यूरिया आवश्यकता का एक बड़ा हिस्सा आयात करता है और घरेलू उत्पादन के लिए भी विदेशी गैस पर निर्भर है, इसलिए अंतरराष्ट्रीय अस्थिरता सीधे तौर पर हमारे राजकोषीय स्वास्थ्य पर प्रहार करती है।

इस वित्तीय वर्ष में उर्वरक सब्सिडी का बोझ दो लाख करोड़ रुपये की मनोवैज्ञानिक सीमा को लांघने को आतुर है। यह केवल एक प्रशासनिक आंकड़ा नहीं है ।यह वह मूल्य है जो राष्ट्र अपनी 'खाद्य संप्रभुता' को सुरक्षित रखने के लिए चुका रहा है। विडंबना यह है कि हम अन्न के उत्पादन में तो आत्मनिर्भर हो चुके हैं, किंतु उस अन्न को उगाने वाले 'पोषक तत्वों' के लिए हम आज भी उन राष्ट्रों के सम्मुख याचक की मुद्रा में हैं, जो उर्वरकों को एक 'सामरिक शस्त्र' की भांति प्रयुक्त कर रहे हैं।

युद्ध स्तर पर प्राथमिकता नहीं देता, तब तक हमारी संप्रभुता प्रत्येक वैश्विक झटके के साथ कांपती रहेगी। तेल का यह चक्रव्यूह हमें यह स्मरण करा रहा है कि 21वीं सदी में वास्तविक स्वतंत्रता वही है, जहां राष्ट्र के इंजन को चलाने वाला ईंधन उसकी अपनी मिट्टी और मेधा से उपजा हो।

पाताल की गैस और धरती की भूख

भारतीय कृषि की वह हरी-भरी चादर, जिसे हम अपनी आत्मनिर्भरता का गौरव मानते हैं, उसके अंतस में एक ऐसी पराधीनता छिपी है जिसकी चर्चा अक्सर बंद कमरों के सांख्यिकीय विमर्श तक सीमित रह जाती है। 21वीं सदी के इस उत्तर-आधुनिक युग में भारत का अन्नदाता केवल इंद्र देव की अनुकंपा या मानसूनी मेघों की लय का मोहताज नहीं रहा ।वह अब सात समंदर पार प्रवाहित होने वाली प्राकृतिक गैस की पाइपलाइनों और वैश्विक सामरिक विद्रूपताओं का बंधक बन चुका है। '3F' के इस त्रिकोण में 'उर्वरक' अर्थात फर्टिलाइजरवह मौन संकट है, जो भारत की खाद्य सुरक्षा के आधार स्तंभों को भीतर ही भीतर खोखला कर रहा है। यथार्थ यह है कि यूरिया की एक बोरी के निर्माण के नेपथ्य में केवल फास्फोरस या पोटाश नहीं होता, बल्कि वहां उस कूटनीतिक दबाव की ऊष्मा होती है, जो मास्को से लेकर मिन्स्क और बीजिंग तक की राजधानियों में उत्पन्न होती है।

रूस, बेलारूस और वैश्विक उर्वरक कार्टेल

वैश्विक उर्वरक राजनीति के मानचित्र पर रूस और बेलारूस का स्थान वही है, जो तेल की राजनीति में सऊदी अरब का है। पोटाश और नाइट्रोजन आधारित उर्वरकों के ये अधिपति आज अपनी भौगोलिक स्थिति और प्रचुर संसाधनों का उपयोग वैश्विक खाद्य-शृंखला को नियंत्रित करने के लिए कर रहे हैं। रूस-यूक्रेन संघर्ष के उपरांत लगे प्रतिबंधों और नौसैनिक अवरोधों ने उर्वरकों की आपूर्ति को एक 'लॉजिस्टिकल दु:स्वप्न' बना दिया है।

जब वाशिंगटन या ब्रसेल्स में प्रतिबंधों की इबारत लिखी जाती है, तो उसका प्रभाव किसी अमेरिकी बैंक के बहीखाते से अधिक भारत के किसी सुदूर गांव के किसान की ऋण-पुस्तिका पर पड़ता है। चीन ने जिस प्रकार अपने यूरिया और फॉस्फेट निर्यात पर कड़े अंकुश लगाए हैं, वह भारत के लिए एक स्पष्ट सामरिक चेतावनी है। यह "उर्वरक राष्ट्रवाद" का वह युग है, जहां मित्र और शत्रु की परिभाषा केवल विचारधारा से नहीं, बल्कि खाद के जहाजों के लंगर डालने से तय हो रही है। भारत आज एक ऐसे 'फर्टिलाइजर इनसिक्योर' राष्ट्र के रूप में खड़ा है, जो खाद्य रूप से सुरक्षित दिखने की मृगतृष्णा में जी रहा है।

किसानों की व्यथा

"भारत का किसान अब केवल मानसून से नहीं, बल्कि वैश्विक गैस कीमतों से भी लड़ रहा है।" यह कथन भारतीय कृषि के वर्तमान यथार्थ का सबसे तीक्ष्ण स्वर है। खेती की बढ़ती लागत ने खेती को एक घाटे के सौदे में परिवर्तित कर दिया है। उर्वरकों के मूल्य में होने वाली प्रत्येक वृद्धि किसान के शुद्ध लाभ को संकुचित कर देती है। यद्यपि सरकार सब्सिडी के माध्यम से कीमतों को नियंत्रित रखने का भगीरथ प्रयास करती है, किंतु आपूर्ति की अनिश्चितता और कालाबाजारी की विभीषिका किसान के धैर्य की परीक्षा लेती रहती है।

न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) की राजनीति यद्यपि गर्माती रहती है, किंतु वह बढ़ती लागत के प्रवेग को रोकने में असमर्थ सिद्ध हो रही है। आज का युवा किसान अपने स्मार्टफोन पर बादलों की स्थिति से अधिक वैश्विक कमोडिटी मार्केट के भावों को ट्रैक कर रहा है। यह एक ऐसी मनोवैज्ञानिक थकान को जन्म दे रहा है, जो भविष्य में कृषि क्षेत्र से व्यापक पलायन का कारण बन सकती है। जब मृदा की भूख सात समंदर पार की कूटनीति पर निर्भर हो, तो किसान स्वयं को अपनी ही मिट्टी पर एक शरणार्थी की भांति अनुभव करने लगता है।

खाद्य मुद्रास्फीति की शृंखला

उर्वरक संकट केवल ग्रामीण भारत की समस्या नहीं है,यह शहरी भारत के मध्यम वर्ग की रसोई का भी प्रश्न है। उर्वरक की बढ़ती लागत सीधे तौर पर उत्पादन लागत को प्रभावित करती है, जिसका अंतिम भार उपभोक्ता की थाली पर पड़ता है। यह एक ऐसी 'विषाक्त शृंखला' है—उर्वरक उत्पादन लागत खाद्य कीमतें—जो मध्यम वर्ग की बचत को निगल रही है।

खाद्य मुद्रास्फीतिकेवल मौद्रिक नीति का विषय नहीं है ।यह हमारी 'स्ट्रक्चरल वल्नरेबिलिटी' यानी संरचनात्मक भेद्यता का परिणाम है। जब तक भारत अपनी उर्वरक आवश्यकता के लिए विदेशी स्रोतों पर निर्भर रहेगा, तब तक हमारी थाली का स्वाद वैश्विक गैस पाइपलाइनों की स्थिरता से ही तय होगा। '3F' का यह दूसरा स्तंभ सिद्ध करता है कि आर्थिक संप्रभुता के बिना राजनैतिक संप्रभुता अधूरी है।

जलवायु परिवर्तन और उर्वरक तनाव

इस संकट का एक और आयाम है—जलवायु परिवर्तन। अनियंत्रित रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग ने भारत की मृदा की उर्वरता को खंडित कर दिया है। मिट्टी की 'वाटर होल्डिंग कैपेसिटी' कम हो रही है, जिससे जल-तनाव बढ़ रहा है। 'मोनो-क्रॉपिंग' और रसायनों की यह जुगलबंदी एक ऐसी

डॉलर बनाम रुपया

"21वीं सदी में युद्ध केवल सीमाओं पर नहीं, बल्कि केंद्रीय बैंकों के बैलेंस-शीट में भी लड़े जा रहे हैं।" यह उक्ति आज भारत के वित्तीय गलियारों में एक कड़वे यथार्थ के रूप में गूंज रही है। संयुक्त राज्य अमेरिका ने जिस प्रकार डॉलर के वैश्विक प्रभुत्व को 'शस्त्र' के रूप में प्रयुक्त किया है, उसने विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को एक 'ट्रैप' में धकेल दिया है। जब अमेरिका अपनी ब्याज दरें बढ़ाता है, तो वैश्विक पूंजी भारत जैसे उभरते बाजारों से पलायन कर पुन: डॉलर की सुरक्षित शरण में लौट जाती है। इस पूंजी निर्गमन का सीधा प्रभाव भारतीय रुपये पर पड़ता है। रुपये का मूल्य गिरना केवल एक मुद्रा का अवसान नहीं है ।यह 'आयातित मुद्रास्फीति' का वह द्वार है जिससे होकर तेल और उर्वरक की बढ़ती कीमतें भारतीय उपभोक्ता की जेब में डकैती डालती हैं। भारतीय रिजर्व बैंक यद्यपि अपने विशाल भंडार के माध्यम से इस प्रहार को सहने का प्रयास कर रहा है, किंतु व्यापार घाटे की बढ़ती खाई और अनिश्चित वैश्विक निवेश के बीच यह रक्षात्मक युद्ध अत्यंत दुरूह होता जा रहा है।

पारिस्थितिकीय त्रासदी की ओर ले जा रही है, जहां भविष्य में अधिक खाद डालने पर भी कम अनाज पैदा होगा। यह गर्मी हमें चेतावनी दे रही है कि हमें केवल 'सस्ता उर्वरक' नहीं चाहिए, बल्कि हमें 'स्वस्थ मृदा' और 'प्राकृतिक खेती' की ओर मुड़ना होगा। किंतु, यह संक्रमण काल अत्यंत दुरूह है, क्योंकि वर्तमान जनसांख्यिकीय दबाव जैविक खेती के मंद परिणामों की प्रतीक्षा नहीं कर सकता।

मिट्टी की मुक्ति का मार्ग

भारत की खाद्य सुरक्षा का महल 'उर्वरक की रेत' पर खड़ा है। 'दूसरी F - Fertiliser' का दबाव केवल आर्थिक बोझ नहीं है, यह एक सामरिक जकड़न है।

"भारत का किसान अब केवल मानसून से नहीं, बल्कि वैश्विक गैस कीमतों से भी लड़ रहा है।" यह केवल एक पंक्ति नहीं, बल्कि आधुनिक भारत का 'राजनैतिक विलाप' है। जब तक हम 'नैनो यूरिया', घरेलू प्राकृतिक गैस अन्वेषण और हरित रसायनों की दिशा में आत्मनिर्भरता प्राप्त नहीं कर लेते, तब तक हमारी खाद्य सुरक्षा का स्विच अन्य राष्ट्रों के हाथ में ही रहेगा। उर्वरक का यह संकट हमें स्मरण करा रहा है कि वास्तविक 'जय किसान' तभी सार्थक होगा, जब भारत की मिट्टी को पुष्ट करने वाले तत्व उसकी अपनी सीमाओं के भीतर निर्मित होंगे।

तिजोरी की पहरेदारी एवं डॉलर का साम्राज्य

'3F' के इस सामरिक त्रिकोण में अंतिम और सर्वाधिक सूक्ष्म स्तंभ 'विदेशी मुद्रा' है। यदि ईंधन और उर्वरक राष्ट्र की धमनियां और मांसपेशियां हैं, तो विदेशी मुद्रा वह प्राणवायु है जिसके बिना आधुनिक अर्थव्यवस्था का अस्तित्व ही असंभव है। 21वीं सदी के इस तीसरे दशक में मुद्राएं अब केवल विनिमय का साधन नहीं रहीं; वे 'सामरिक अस्त्र' बन चुकी हैं। वाशिंगटन के फेडरल रिजर्व से निकलने वाली एक घोषणा समूचे विश्व के केंद्रीय बैंकों के बहीखातों में भूकंप लाने की सामर्थ्य रखती है। भारत के लिए विदेशी मुद्रा भंडार केवल एक सांख्यिकीय संचय नहीं है, बल्कि यह हमारी संप्रभुता का वह अभेद्य 'डिजिटल कवच' है, जो रुपये की साख को वैश्विक सट्टेबाजी और भू-राजनीतिक अस्थिरता से सुरक्षित रखता है। किंतु, इस अनिश्चित कालखंड में, इस कवच पर पड़ने वाला दबाव अभूतपूर्व है।

चौथा 'F': निजी निवेश का शिशिर काल

इस विमर्श की विश्वसनीयता तब तक अपूर्ण रहेगी, जब तक हम एक अन्य सूक्ष्म किंतु घातक 'F' की चर्चा नहीं करते—निजी निवेश में गिरावट। यद्यपि सरकार 'कैपेक्स' और बुनियादी ढांचे पर भारी व्यय कर रही है, किंतु निजी क्षेत्र का आत्मविश्वास आज भी संशय के कुहासे में है। 'स्टार्टअप विंटर' और सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्योगों की थकान यह संकेत दे रही है कि भारतीय 'ग्रोथ स्टोरी' का इंजन अब असंतुलित हो रहा है। निजी पूंजी का यह संकोच '3F' संकट की ही एक परिणति है। जब कच्चे माल की लागत अनिश्चित हो और मुद्रा की विनिमय दर अस्थिर, तो निवेशक दीर्घकालिक प्रतिबद्धताओं से पीछे हटने लगता है। क्या भारत की विकास यात्रा केवल सरकारी खर्च के बैसाखियों पर टिकी रह सकती है? यह वह प्रश्न है जो इस संक्रमण काल में नीति-निर्माताओं को विचलित कर रहा है। 'कंजम्पशन स्ट्रेस' यानी उपभोग में कमी और बढ़ती बेरोजगारी इस संकट के वे सामाजिक पदचिन्ह हैं, जिन्हें केवल सांख्यिकीय लीपापोती से नहीं ढका जा सकता।

आने वाले वर्षों में विश्व अर्थव्यवस्था उन राष्ट्रों के बीच विभाजित होगी जो केवल विकास करते हैं, और वे जो संकट के समय भी अपनी ऊर्जा, खाद्य और वित्तीय संप्रभुता को सुरक्षित रख पाते हैं। भारत अब इसी ऐतिहासिक परीक्षा के द्वार पर खड़ा है।

मध्यम वर्ग की बेड़ियां और किसानों का संताप

'3F' के इस भूचाल की अंतिम और सर्वाधिक हृदयविदारक मार समाज के जीवंत अंगों पर पड़ती है। भारत का मध्यम वर्ग, जो राष्ट्र की आकांक्षाओं का मेरुदंड है, आज ईएमआई और बढ़ती जीवन लागत के दोहरे पाटों के बीच पिस रहा है। पेट्रोल की प्रत्येक बूंद और शिक्षा के बढ़ते खर्च उसकी 'डिस्पोजेबल इनकम' को निगल रहे

हैं। आर्थिक चिंता अब धीरे-धीरे मनोवैज्ञानिक अवसाद में परिवर्तित हो रही है। ग्रामीण भारत में किसानों का संताप और भी गहरा है। जब उर्वरक की उपलब्धता संदिग्ध हो और डीजल पंप चलाना विलासिता बन जाए, तो 'अन्नदाता' की उपाधि केवल एक उपहास प्रतीत होती है। शहरी भारत की 'कॉस्ट ऑफ लिविंग' और ग्रामीण भारत की 'कॉस्ट ऑफ प्रोडक्शन' के बीच का यहसंघर्ष सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न कर सकता है। यह उस असंतोष की उष्णता है जो आर्थिक असमानता की कोख से जन्म ले रही है।

आत्मनिर्भरता का नव-उन्मेष

संकट जब विकराल होता है, तो वह समाधान के नए मार्ग भी प्रशस्त करता है। '3F' का यह दबाव भारत के लिए एक 'रणनीतिक अवसर' भी है, कहा भी जाता है कि आपदा अवसर भी लेकर प्रस्तुत होती है, इसके अंतर्गतहम अपनी अर्थव्यवस्था को जड़ से पुनर्गठित करे।

1. ऊर्जा विविधीकरण: हमें केवल तेल के आयात स्रोतों को नहीं बदलना है, बल्कि ऊर्जा के स्वरूप को बदलना होगा। परमाणु ऊर्जा का विस्तार, 'ग्रीन हाइड्रोजन' का मिशन और नवीकरणीय ऊर्जा के भंडारण में आत्मनिर्भरता ही हमें हॉर्मुज की जकड़न से मुक्त कर सकती है।

2. उर्वरक स्वावलंबन: प्राकृतिक गैस पर निर्भरता कम करने के लिए 'नैनो यूरिया' और 'हरित रसायनों' को युद्ध स्तर पर प्रोत्साहित करना होगा।

3. मुद्रा का अंतरराष्ट्रीयकरण: रूस, यूएई और अन्य साझीदारों के साथ रुपया व्यापार के गलियारे निर्मित करना अब कूटनीतिक विकल्प नहीं, बल्कि आर्थिक विवशता है।

4. सामरिक भंडार: तेल और महत्वपूर्ण खनिजों के भंडार को वर्तमान आवश्यकता से तीन गुना अधिक बढ़ाना राष्ट्र की 'अस्तित्वगत बीमा' है।

संप्रभुता का नया क्षितिज

यह विश्लेषण हमें उस मुहाने पर छोड़ता है जहां से भविष्य का मार्ग अत्यंत धुंधला किंतु चुनौतीपूर्ण है। '3F' (ईंधन, उर्वरक और विदेशी मुद्रा) का यह संकट कोई सामयिक व्यवधान नहीं है,यह भारत की आर्थिक संप्रभुता की वह अग्निपरीक्षा है, जो यह निर्धारित करेगी कि क्या हम वास्तव में एक वैश्विक अधिनायक बनने के योग्य हैं।

आने वाले वर्षों में विश्व अर्थव्यवस्था उन राष्ट्रों के बीच विभाजित होगी जो केवल विकास करते हैं, और वे जो संकट के समय भी अपनी ऊर्जा, खाद्य और वित्तीय संप्रभुता को सुरक्षित रख पाते हैं। भारत अब इसी ऐतिहासिक परीक्षा के द्वार पर खड़ा है। यह समय केवल आंकड़ों के प्रबंधन का नहीं, बल्कि सभ्यतागत दृढ़ता का है। यदि हम तेल की पाइपलाइनों, खाद के बोरों और डॉलर के बहीखातों में अपनी स्वतंत्रता की रक्षा कर पाए, तभी 21वीं सदी का यह कुरुक्षेत्र हमारे विजय-तिलक का गवाह बनेगा। अन्यथा, इतिहास हमें एक ऐसे राष्ट्र के रूप में याद रखेगा जिसने स्वप्न तो विराट देखे, किंतु अपनी आधारशिला को पराई कृपा पर छोड़ दिया। ○○○

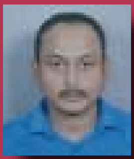

संतु दास

न्यायपालिका की एक तीक्ष्ण टिप्पणी ने उस 'कीट' को प्रज्वलित कर दिया जिसे व्यवस्था ने विस्मृत कर दिया था। 'कॉकरोच जनता पार्टी' केवल एक डिजिटल उपहास नहीं, बल्कि भारत की 'जेन-जी' के संचित रोष का वह विस्फोट है जिसने लोकतांत्रिक अधि-वृतांत को ही खंडित कर दिया है।

'कॉकरोच' का रणघोष

भारतीय राजनीति के इतिहास में कुछ विवर्तन अत्यंत मंद गति से होते हैं, किंतु कुछ ऐसे होते हैं जो किसी विद्युत कौंध की भांति समूचे राष्ट्र के मानस को झकझोर देते हैं। मध्य मई का यह कालखंड एक ऐसी ही विस्मयकारी घटना का साक्षी बना है। एक ऐसी 'पार्टी' का अभ्युदय, जिसके पास न तो कोई भौतिक कार्यालय है, न कोई पारंपरिक झंडा, और न ही कोई दशकों पुरानी विरासत। 'कॉकरोच जनता पार्टी' (सीजेपी) ने मात्र पांच दिनों के भीतर डिजिटल पटल पर 1.5 करोड़ फॉलोअर्स का वह विशाल साम्राज्य खड़ा कर लिया, जिसने भारतीय जनता पार्टी जैसे सांगठनिक दिग्गजों के इंस्टाग्राम अधिराज्य को भी बौना सिद्ध कर दिया। यह केवल आंकड़ों की बाजीगरी नहीं है; यह उस 'वॉइस ऑफ लेजी एंड अनइंप्लॉयड' का उद्घोष है, जिसने आलस्य और अभाव को एक सामरिक अस्त्र में परिवर्तित कर दिया है।

न्यायिक वज्रपात और अपमान का प्रतिशोध

इस प्रलयंकारी आंदोलन की जड़ें किसी राजनैतिक रैली में नहीं, बल्कि देश की सर्वोच्च अदालत के विसंक्रमित कक्षों में निहित हैं। वर्तमान मुख्य न्यायाधीश सूर्यकांत द्वारा एक प्रकरण की सुनवाई के दौरान की गई वह टिप्पणी—जहां उन्होंने कथित तौर पर बेरोजगार युवाओं की तुलना 'कॉकरोच' से कर दी थी जो सोशल मीडिया (सोशल मीडिया) और आरटीआई (आरटीआई) के माध्यम से 'सिस्टम' पर प्रहार करते हैं—एक ऐतिहासिक 'ट्रिगर' सिद्ध हुई। न्यायपालिका, जो लोकतंत्र में विश्वास की अंतिम शरणस्थली मानी जाती है, वहां से निकले इन अपमानजनक शब्दों ने भारत के युवा मानस में एक ऐसा अस्तित्वगत संत्रास पैदा किया कि उन्होंने उसी 'कीट' की पहचान को अपना गौरव बना लिया।

यह दृश्य वैसा ही था जैसे कभी किसी ने स्वयं को 'चौकीदार' कहा तो जनता ने उसे अंगीकार किया, किंतु इस बार स्वर अधिक उग्र और विद्रोही है। 'मैं भी कॉकरोच' का हैशटैग केवल एक शब्द नहीं, बल्कि उस तिरस्कार का प्रत्युत्तर है जिसे समाज का कुलीन वर्ग निरंतर हाशिये पर खड़े लोगों की ओर फेंकता रहा है।

डिजिटल बिसात का नया ग्रैंडमास्टर

इस संपूर्ण प्रकरण के नेपथ्य में एक अत्यंत मेधावी और रणनीतिक मस्तिष्क कार्य कर रहा है—अभिजीत दीपके। औरंगाबाद (संभाजीनगर) की माटी से उपजा यह व्यक्तित्व बोस्टन यूनिवर्सिटी से जनसंपर्क का विशेषज्ञ है और आम आदमी पार्टी के 'डायरेक्टर ऑफ कम्युनिकेशन' के रूप में अपनी सांगठनिक क्षमता सिद्ध कर चुका है। दीपके ने अत्यंत सूक्ष्मता से अरविंद केजरीवाल के उस आह्वान को क्रियान्वित किया, जिसमें उन्होंने देश के युवाओं को 'नेपाल और बांग्लादेश' की भांति सड़कों पर आने के लिए प्रेरित किया था। दीपके ने एआई (एआई) का उपयोग कर 'कॉकरोच' के ऐसे सिनेमैटिक बिम्ब गढ़े, जिन्होंने देखते ही देखते इंस्टाग्राम और टिकटॉक (टिकटॉक) के एल्गोरिदम को बंधक बना लिया। 'क्लीन टुडे, बेटर टुमारो' के नारे के

इस आंदोलन का वास्तविक शिल्पकार कोई पारंपरकि राजनैतिक दल नहीं, बल्कि वह कृत्रिम मेधा (एआई) और डिजिटल पारिस्थितिकी तंत्र है जिसने रातों-रात 1.5 करोड़ मूक स्वरों को एक वैश्विक मंच प्रदान किया। जब बेरोजगारी को 'कीट' की संज्ञा दी जाती है, तो व्यवस्था को एक ऐसे संक्रमण के लिए सन्नद्ध रहना चाहिए जो जड़वत हो चुके संस्थानों की नींव हिला सके।

महंगाई
बेरोज़गारी
भ्रष्टाचार

साथ प्रज्वलित यह डिजिटल आग अब एक ऐसे राजनैतिक मूमेंटम में रूपांतरित हो चुकी है, जहां विपक्ष के कद्दावर नेता जैसे महुआ मोइत्रा और अखिलेश यादव भी अपनी राजनैतिक प्रासंगिकता खोजने हेतु इस 'कीट-तंत्र' की छत्रछाया में खड़े दिखाई दे रहे हैं।

व्यवस्था के विरुद्ध एक सर्जिकल स्ट्राइक

'कॉकरोच जनता पार्टी' का चुनावी घोषणापत्र किसी पारंपरकि दस्तावेज की भांति नहीं है,यह सत्ता के प्रतिष्ठानों पर एक प्रहारक 'सर्जिकल स्ट्राइक' है। इसके पांच मुख्य बिंदु व्यवस्था की दुखती रगों को बींध रहे हैं:

1. **न्यायिक शुचिता:** किसी भी मुख्य न्यायाधीश को पदमुक्ति के पश्चात राज्यसभा या किसी भी सरकारी लाभ के पद पर आसीन होने की अनुमति नहीं होगी।
2. **निर्वाचन आयोग पर अंकुश:** मुख्य चुनाव आयुक्त (सीईसी) की जवाबदेही तय की जाए और विफलता की स्थिति में उन्हें यूएपीए (यूएपीए) के अंतर्गत दंडित किया जाए।
3. **लैंगिक न्याय:** महिलाओं के लिए विधायी निकायों में 50 प्रतिशत आरक्षण की अपरिहार्यता।
4. **पूँजीवादी मीडिया का दहन:** अंबानी और अडानी जैसे औद्योगिक घरानों द्वारा नियंत्रित समाचार चैनलों के लाइसेंस (लचइसेंस) रद्द करना और 'गोदी मीडिया' के एंकर्स की संपत्ति की जांच।
5. **दलबदल पर पूर्ण विराम:** एक दल से दूसरे दल में जाने वाले जनप्रतिनिधियों को आगामी निर्वाचन में प्रतिबंधित करना।

यह घोषणापत्र स्पष्ट करता है कि यह आंदोलन केवल 'बेरोजगारी' तक सीमित नहीं है, बल्कि यह उन संस्थागत क्षरणों के विरुद्ध एक प्रलयंकारी विद्रोह है जिसने लोकतंत्र को केवल एक औपचारिक आवरण मंव सीमित कर दिया था।

बॉट और विदेशी षड्यंत्र

किंतु, इस डिजिटल सुनामी के साये में 'संशय' के काले बादल भी कम सघन नहीं हैं। सत्ता पक्ष और कई विश्लेषकों का यह तर्क है कि 1.5 करोड़ फॉलोअर्स का यह आंकड़ा किसी जैविक विकास का परिणाम नहीं, बल्कि 'हॉट मनी' और 'डिजिटल मशीनरी' का कमाल है। 'कॉकरोच जनता पार्टी' के फॉलोअर्स की सूची में पाकिस्तानी, तुर्की और बांग्लादेशी खातों की अधिकता ने इस चर्चा को जन्म दिया है कि नेपथ्य में कोई 'विदेशी हाथ' सक्रिय है।

क्या यह सचमुच एक स्वत:स्फूर्त युवा विद्रोह है, या फिर 'बॉट' तकनीक के माध्यम से निर्मित एक आर्टिफिशियल जनमत? हाल ही में राघव चड्ढा जैसे नेताओं पर लगे 'परचेस्ड फॉलोअर्स' के आरोपों ने इस विमर्श को और भी प्रखर बना दिया है। यदि यह सिद्ध होता है कि यह आंदोलन विदेशी सर्वरों के माध्यम से संचालित है, तो यह 'जन-आंदोलन' से बदलकर एक 'सुरक्षा संकट' में परिवर्तित हो जाएगा। इन्हीं संशयों के मद्देनजर 'कॉकरोच जनता पार्टी' के सोशल मीडिया अकाउंट को सस्पेंड कर दिया गया है।

संक्रमण की बेला

भारत आज एक ऐसे ऐतिहासिक संक्रमण काल में है जहां 'प्रतिनिधित्व' और 'जवाबदेही' के पारंपरिक अर्थ बदल रहे हैं। 'कॉकरोच जनता पार्टी' चाहे बॉट (बॉट) से निर्मित हो या वास्तविक युवाओं के आक्रोश से, इसने एक कड़वे सत्य को पुनः स्थापित कर दिया है—जब व्यवस्था का शीर्ष वर्ग हाशिये के लोगों को 'कीट' समझने की भूल करता है, तो वही कीट समूचे तंत्र को कुतरने की सामर्थ्य रखते हैं।

यह 'डिजिटल कुरुक्षेत्र' उस नेतृत्व के अभाव की गूंज है, जहां युवा स्वयं को किसी भी पारंपरिक दल में प्रतिबिंबित नहीं पाता। यदि सरकार ने समय रहते इस बेचैनी का उत्तर 'स्किल डेवलपमेंट' और 'रोजगार के वास्तविक अवसरों' से नहीं दिया, तो यह 'कीट-क्रांति' केवल सोशल मीडिया के हैशटैग तक सीमित नहीं रहेगी।

ooo

जलज श्रीवास्तव

वैश्विक अशांति के सघन कुहासे के मध्य, भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की बतौर प्रधान-राजनयिक के रूप में पांच राष्ट्रों की यात्रा मात्र एक राजनयिक दौरा नहीं, बल्कि भारत की 'ऊर्जा संप्रभुता' और 'तकनीकी स्वायत्तता' को सुरक्षित करने का एक ऐतिहासिक महा-अभियान रही है।

नरेंद्र मोदी प्रधान-राजनयिक

15 मई 2026 की वह स्वर्णिम भोर, जब प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी का विमान संयुक्त अरब अमीरात (यूएई) की तपती मरुभूमि पर उतरा, तो कूटनीति के पारंपरिक प्रोटोकॉल धरे के धरे रह गए। विमान की सीढ़ियों से उतरते ही प्रधानमंत्री ने अमीराती शासक शेख मोहम्मद बिन जायद अल नहयान को जिस आत्मीयता के साथ गले लगाया, उसने अंतरराष्ट्रीय संबंधों के शुष्क धरातल पर मानवीय ऊष्मा का संचार कर दिया। यह आलिंगन केवलऑप्टिक्स का विषय नहीं था -यह उस प्रगाढ़ विश्वास का प्रतिबिंब था जिसे मोदी ने पिछले एक दशक में मध्य-पूर्व को भारतीय विदेश नीति का केंद्र बिंदु बनाकर अर्जित किया है।

यह प्रधानमंत्री की यूएई की आठवीं यात्रा थी, किंतु इसकी तात्कालिकता पूर्व की तुलना में कहीं अधिक प्रखर थी। हॉर्मुज जलडमरूमध्य में ईरानी अवरोध और अमेरिकी जवाबी घेराबंदी के कारण वैश्विक तेल बाजार में प्रलयंकारी उथल-पुथल व्याप्त थी। ऐसे समय में, जब भारत पांच राज्यों के निर्वाचन के पश्चात आर्थिक नीति में 'मितव्ययिता के महामंत्र' को पुनः जीवित कर रहा था, अपने सबसे विश्वसनीय ऊर्जा साझीदार के साथ खड़ा होना अनिवार्य था। यूएई में निवास करने वाले 43 लाख भारतीय श्रमिकों का भविष्य भी इसी व्यक्तिगत केमिस्ट्री पर टिका था। शेख अल नाहयान का नियोक्ताओं को यह संकेत देना कि वे भारतीय कामगारों की छंटनी न करें, मोदी की उस सॉफ्ट पावर की विजय थी, जो व्यापारिक घाटे के आंकड़ों से कहीं ऊपर है। इस यात्रा की सर्वाधिक सामरिक उपलब्धि यूएई द्वारा भारत के स्ट्रेटेजिक पेट्रोलियम रिजर्व में अपनी भागीदारी को बढ़ाकर 30 मिलियन बैरल करना और एक विशाल

गैस रिजर्व की स्थापना पर सहमति देना रही। संकट के समय में यह एक मित्र का दूसरे मित्र के लिए संबल था।

वैश्विक बिसात पर भारत का बढ़ता कद

प्रधानमंत्री की यह यात्रा उस समय हुई जब वैश्विक शक्ति संतुलन में एक नया विवर्तन देखा जा रहा था। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प अपनी बीजिंग यात्रा के दौरान चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग के कूटनीतिक प्रवचनों के सम्मुख असहाय प्रतीत हो रहे थे। इसके विपरीत, नई दिल्ली में ब्रिक्स की सफल बैठक संपन्न हो रही थी, जहां ईरानी विदेश मंत्री अब्बास अराग्छी की उपस्थिति ने वाशिंगटन और तेहरान के मध्य जारी गतिरोध के बीच भारत को एक 'अपरिहार्य मध्यस्थ' के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया था।

अराग्छी का ईरान से बाहर निकलकर दो दिनों तक भारत में ठहरना कूटनीतिक जगत के लिए एक विस्मयकारी संकेत था। प्रधानमंत्री मोदी ने इस सामरिक अवसर का लाभ उठाते हुए ऊर्जा सुरक्षा, तकनीकी साझीदारी और रक्षा सहयोग को अपनी यात्रा के मेटा-नैरेटिव के रूप में पिरोया। डच सेमी-कंडक्टर दिग्गज एएसएमएल के साथ टाटा का समझौता और गुजरात के महत्वाकांक्षी 'कल्पसर' प्रोजेक्ट में डच तकनीक का समावेश भारत के औद्योगिक भविष्य की नई इबारत लिख रहे हैं।

नॉर्डिक शिखर सम्मेलन

प्रधानमंत्री की यात्रा का दूसरा चरण नीदरलैंड्स, स्वीडन, नॉर्वे और इटली तक विस्तृत था। 'भारत-नॉर्डिक शिखर सम्मेलन' एक ऐसा मंच बनकर उभरा, जिसकी सांस्कृतिक भिन्नताओं और भौगोलिक दूरी के पश्चात भी सामरिक सार्थकता अत्यंत सघन थी। आर्कटिक परिषद में 'पर्यवेक्षक' का दर्जा रखने वाला भारत अब इस क्षेत्र को केवल हिमखंडों का विस्तार नहीं, बल्कि अपनी अंतरिक्ष अनुसंधान और मौसमी भविष्यवाणियों के लिए एक अनिवार्य प्रयोगशाला मानता है।

वैज्ञानिक साक्ष्य यह सिद्ध करते हैं कि आर्कटिक के मौसम का भारतीय मानसून और हिमालयी पारिस्थितिकी तंत्र पर सीधा प्रभाव पड़ता है। जब चीन स्वयं को 'नियर-आर्कटिक नेशन' के रूप में प्रस्तुत कर रहा हो, तब स्वालबार्ड में भारत का स्थायी अनुसंधान केंद्र और नॉर्डिक राष्ट्रों के साथ 'ग्रीन हाइड्रोजन' एवं 'क्रिटिकल मिनरल्स' पर सहयोग, राष्ट्रीय सुरक्षा की एक अनिवार्य शर्त बन जाता है। यद्यपि नॉर्डिक देश रूस के प्रति एक तीव्र अरुचि रखते हैं, किंतु भारत की मास्को के साथ संतुलित साझीदारी को उन्होंने स्वीकार किया। नॉर्वे के प्रधानमंत्री जोनास स्टोर का यह वक्तव्य कि 'भारत मास्को के साथ अपने प्रभाव का उपयोग वार्ता के लिए कर सकता है,' नई दिल्ली की उस कूटनीतिक स्वायत्तता की स्वीकारोक्ति थी, जिसे भारत ने बाह्य दबावों के पश्चात भी अक्षुण्ण रखा है।

आर्थिक संप्रभुता और निवेश का महासंगम

विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता रणधीर जायसवाल के अनुसार, इस यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री ने 50 से अधिक वैश्विक कंपनियों के मुख्य कार्यकारी अधिकारियों (सीईओ) के साथ विमर्श किया। भारत में पहले से ही निवेशित इन राष्ट्रों की 180 अरब डॉलर की संचित पूंजी के अतिरिक्त, 40 अरब डॉलर की नई प्रतिबद्धताओं ने भारतीय अर्थव्यवस्था की धमनियों में नई ऊर्जा का संचार किया है।

नीदरलैंड्स द्वारा चोल काल की शाही ताम्रपत्रों जैसी बहुमूल्य सांस्कृतिक पुरावशेषों की वापसी केवल एक शिष्टाचार नहीं था, बल्कि यह भारत की सभ्यतागत गरिमा की वैश्विक पुनर्स्थापना थी। धोलेरा में सेमी-कंडक्टर साझीदारी का प्रारंभ, खनन और क्रिटिकल मिनरल्स में तकनीकी हस्तांतरण, और त्रिपुरा में नीदरलैंड्स के सहयोग से बनने वाला फ्लोरीकल्चर केंद्र—ये सभी परिणाम इस सत्य की पुष्टि करते हैं कि भारत अब केवल एक बाजार नहीं, बल्कि एक सह-उत्पादक की भूमिका में है। स्वीडन के औद्योगिक गढ़ गुटेनबर्ग में बिताया गया समय और वहां स्वीडन-इंडिया टेक कॉरिडोर की परिकल्पना ने कृत्रिम मेधा और हरित गतिशीलता को एक नया आयाम प्रदान किया है।

रोम का रोमांस और 25 वर्षों की साधना

यात्रा का चरमोत्कर्ष इटली में हुआ, जहां प्रधानमंत्री मोदी और इतालवी प्रधानमंत्री

जॉर्जिया मेलोनी के मध्य की आत्मीयता ने सोशल मीडिया पर एक उत्सव का वातावरण निर्मित कर दिया। मेलोनी को दी गई 'मेलोडी' टॉफियों के प्रतीकात्मक उपहार ने कूटनीति के गंभीर विमर्श में एक मानवीय सौंदर्य घोल दिया।

किंतु इस उत्सव के पीछे एक दृढ़ संकल्प भी विद्यमान था। नीदरलैंड्स में भारतीय प्रवासियों को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री ने अपनी 25 वर्षों की सार्वजनिक सेवा—गुजरात के मुख्यमंत्री से लेकर भारत के प्रधानमंत्री तक—को केवल एक सांख्यिकीय आंकड़ा नहीं, बल्कि राष्ट्र के आशीर्वाद की एक निरंतर बहने वाली धारा बताया। उन्होंने स्पष्ट किया कि उनका लक्ष्य हॉर्मुज की तात्कालिक चुनौतियों से कहीं आगे, भारत के पूर्ण अभ्युदय की अगली श्रेणियों को लांघना है।

भविष्य का रणघोष

प्रधानमंत्री मोदी की यह पांच राष्ट्रों की यात्रा सिद्ध करती है कि 2026 का भारत अब वैश्विक झटकों का मूक दर्शक नहीं है। यह एक ऐसा भारत है जो ऊर्जा संकट के भंवर में फँसने के बजाय अपने लिए नए जलमार्ग, नए खनिज स्रोत और नई तकनीक के किलों का निर्माण कर रहा है। हॉर्मुज की लहरें भले ही अशांत हों, किंतु भारत की सामरिक नौका अब एक ऐसे मांझी के हाथ में है, जिसकी दृष्टि सदैव ध्रुव तारे की भांति स्थिर और लक्ष्य की ओर उन्मुख है।

यह यात्रा ऊर्जा, तकनीक और सभ्यतागत गौरव का वह महासंगम थी, जिसने विश्व को यह संदेश दे दिया है कि भारत अब कूटनीति की बिसात पर केवल एक मोहरा नहीं, बल्कि एक ऐसा ग्रैंडमास्टर है जो अपनी गोटियाँ स्वयं बिछाता है। ○○○

संतोष कुमार

तीन वर्ष बीत जाने के बाद भी मणिपुर की हिंसा केवल कानून-व्यवस्था का संकट नहीं, बल्कि विश्वास, न्याय और सह-अस्तित्व के विघटन की त्रासदी बनी हुई है। विस्थापन, सामुदायिक ध्रुवीकरण और राजनीतिक निष्क्रियता ने राज्य को ऐसे मोड़ पर ला खड़ा किया है, जहां शांति अभी भी एक दूरस्थ स्वप्न प्रतीत होती है।

मणिपुर

घृणा का भस्मासुर

इतिहास के पन्नों पर जब भी किसी राज्य के विखंडन और मानवीय संवेदनाओं के अवसान की गाथा लिखी जाएगी, 3 मई 2023 की वह काली तिथि रक्तवर्ण अक्षरों में अंकित होगी। मणिपुर की वादियों में उस दिन जो दावानल प्रस्फुटित हुआ था, वह तीन वर्षों के पश्चात भी शांत होने का नाम नहीं ले रहा है। मैतेई, कुकी, जोमी और उनके सजातीय समुदायों के मध्य उपजी यह जातीय विभीषिका आज एक ऐसे भस्मासुर में रूपांतरित हो चुकी है, जिसने न केवल भूगोल को बल्कि मणिपुर की आत्मा को भी दो टुकड़ों में विभाजित कर दिया है। यह केवल एक राजनैतिक संकट नहीं है, बल्कि यह आधुनिक भारत के इतिहास का वह पेंडोरा बॉक्स है, जिसके खुलने के पश्चात केवल असुरक्षा और अविश्वास ही शेष रह गए हैं।

विभाजन की अमिट लकीरें

मणिपुर आज शारीरिक और भावनात्मक रूप से पूर्णतः विभाजित है। इंफाल की उर्वर घाटियां, जहां मैतेई समुदाय का आधिपत्य है, और पहाड़ियां, जहां कुकी और जोमी समुदायों का निवास है—इन दोनों के मध्य अब केवल सुरक्षा बलों की चौकियां नहीं हैं, बल्कि घृणा की एक ऐसी अदृश्य दीवार खड़ी हो गई है जिसे लांघने का साहस किसी में नहीं है। 260 से अधिक बलिदान और 60,000 से अधिक आंतरिक रूप से विस्थापित नागरिकों की पीड़ा ने इस राज्य को शरणार्थी शिविरों के एक अंतहीन जाल में परिवर्तित कर दिया है। यद्यपि समय बीतने के साथ कुछ लोग शिविरों से बाहर आए हैं, किंतु एक बड़ा वर्ग आज भी उसी अनिश्चितता के अंधकार में जीने को अभिशप्त है, जिनके पास लौटने के लिए अब कोई घर शेष नहीं है।

राष्ट्रपति शासन: एक विफल प्रयोग

फरवरी 2025 से फरवरी 2026 के मध्य मणिपुर को राष्ट्रपति शासन के अधीन रखा गया, इस आशा में कि संवैधानिक व्यवस्थाओं के माध्यम से शांति की पुनःस्थापना संभव होगी। किंतु, यह प्रयास भी एक कूटनीतिक मृगतृष्णा सिद्ध हुआ। प्रशासन ने सामान्य स्थिति का भ्रम उत्पन्न करने के लिए अंतर्जनपदीय बस सेवाओं का प्रारंभ किया, किंतु यात्रियों का अभाव और कांगपोकपी जैसे जिलों में जलती हुई बसें इस सत्य का उद्घोष कर रही थीं कि भय का साम्राज्य अभी समाप्त नहीं हुआ है। इंफाल में आयोजित 'संगाई महोत्सव' और उखरुल का 'शिरुई लिली महोत्सव' केवल नौकरशाहों और विशिष्ट वर्गों के कर्मकांड बनकर रह गए। इन उत्सवों में वह जन-भागीदारी अनुपस्थित थी, जो किसी समाज के जीवंत होने का प्रमाण होतीहै।

सचिवालय की बिसात और नेतृत्व का संकट

फरवरी 2026 में 11 महीनों के लंबे अंतराल के पश्चात, भारतीय जनता पार्टी ने अंततः युमनाम खेमचंद के रूप में एक नया मुख्यमंत्री राज्य को प्रदान किया। प्रश्न यह है कि जिस राज्य में सत्ताधारी दल के पास स्पष्ट बहुमत था, वहां नेतृत्व के निर्धारण में इतना विलंब क्यों हुआ? खेमचंद सरकार के गठन के मात्र दो महीनों के भीतर ही हिंसा का एक नया चक्र प्रारंभ हो गया। अब यह संघर्ष केवल मैतेई और कुकी के मध्य सीमित नहीं रहा, बल्कि तांगखुल नागा और कुकी समुदायों के बीच भी रक्तरंजित झड़पें होने लगीं। कांगपोकपी और चुराचांदपुर को जोड़ने वाले मार्गों पर होने वाले घातक संघर्ष यह सिद्ध करते हैं कि मणिपुर में शांति का प्रत्येक प्रयास बारूद के ढेर पर खड़ा है।

न्याय की अंत्येष्टि और मौन का प्रतिशोध

मणिपुर की त्रासदी का सर्वाधिक भयावह पक्ष विधिक प्रक्रियाओं की जड़ता है। तीन वर्षों के अंतराल के पश्चात भी, उन जघन्य अपराधों—चाहे वह कुकी महिलाओं का नग्न जुलूस हो या सामूहिक बलात्कार के प्रकरण—में किसी भी निर्णायक अन्वेषण या दोषसिद्धि की सूचना सार्वजनिक नहीं की गई है। न्याय का यह अभाव समुदायों के भीतर प्रतिशोध की अग्नि को और प्रज्वलित कर रहा है। घाटी में मैतेई समाज का आक्रोश अब राज्य और केंद्र सरकार की ओर मुड़ चुका है। 'मैरा पैबी' (महिला समूहों) ने खुले तौर पर भाजपा के केंद्रीय नेतृत्व को इस संकट का सूत्रधार माना है, जबकि पहाड़ियों में कुकी और जोमी समुदायों के भीतर एक सामरिक थकानके लक्षण दिखाई दे रहे हैं।

नारको-टेररिज्म और संप्रभुता

मैतेई समुदाय, जो स्वयं को घाटी के संसाधनों का वास्तविक स्वामी मानता है, वह अल्पसंख्यक समुदायों के बढ़ते प्रभाव से असुरक्षित अनुभव कर रहा है। उन्होंने कुकी और जोमी समुदायों को 'अवैध प्रवासी' और 'नारको-आतंकवादी' की संज्ञा देकर इस संघर्ष को राष्ट्रीय सुरक्षा के विमर्श से जोड़ दिया है। दूसरी ओर, कुकी सशस्त्र समूह निरंतर यह स्पष्ट कर रहे हैं कि उनका आंदोलन पृथकतावाद के लिए नहीं, बल्कि स्वायत्तता और अस्तित्व

की रक्षा के लिए है। नागा समुदाय, जो अब तक अपेक्षाकृत शांत थे, वे भी अब क्षेत्रीय नियंत्रण और शांति वार्ताओं की विफलता के कारण इस कुरुक्षेत्र का हिस्सा बन रहे हैं।

जोमी समुदाय आज भी भाजपा विधायक वुंगजागिन वाल्टे की मृत्यु का शोक मना रहा है, जिनकी मृत्यु मैतेई भीड़ के हमले के पश्चात हुई थी। उनके पार्थिव शरीर को महीनों तक लमका के मुर्दाघर में रखना इस बात का प्रतीक है कि न्याय के बिना अंतिम संस्कार भी संभव नहीं है।

दिल्ली का दूरस्थ नियंत्रण और शासन की विफलता

संकट के प्रारंभ से ही भारत के प्रधानमंत्री की चुप्पी और उनकी अनुपस्थिति ने मणिपुर में उपेक्षा के घावों को गहरा किया है। यद्यपि दो वर्षों के पश्चात प्रधानमंत्री ने एक संक्षिप्त यात्रा की, किंतु उनके उस चिर-परिचित ओजस्वी संवाद का वहां पूर्ण अभाव दिखा। गृह मंत्री अमित शाह की प्रारंभिक सक्रियता के पश्चात मणिपुर का प्रबंधन पूर्णतः दिल्ली के रिमोट कंट्रोल के अधीन प्रतीत होता है।

वर्तमान में मुख्यमंत्री खेमचंद के अधीन तीन प्रमुख मंत्री—नेमचा किपगेन (कुकी), लोसी दिखो (नागा) और गोविंददास कोंथौजाम (गृह मंत्री)—प्रशासन चलाने का प्रयास कर रहे हैं। किंतु 59 अन्य विधायकों की रहस्यमयी निष्क्रियता और नागरिक समाज के संगठनों द्वारा विश्वास बहाली के प्रयासों का अभाव मणिपुर को एक ऐसी अंधेरी सुरंग की ओर ले जा रहा है जिसका कोई अंत नहीं है।

जोमी समुदाय आज भी भाजपा विधायक वुंगजागिन वाल्टे की मृत्यु का शोक मना रहा है, जिनकी मृत्यु मैतेई भीड़ के हमले के पश्चात हुई थी। उनके पार्थिव शरीर को महीनों तक लमका के मुर्दाघर में रखना इस बात का प्रतीक है कि न्याय के बिना अंतिम संस्कार भी संभव नहीं है।

राख के नीचे दबी संभावना

मणिपुर आज अपने इतिहास के सर्वाधिक विद्रूप कालखंड से गुजर रहा है। यह वह समय है जब समुदायों को संकीर्ण सीमाओं से ऊपर उठकर एक-दूसरे का हाथ थामना अनिवार्य है। किंतु विडंबना यह है कि राज्य के प्रतिनिधि अगले निर्वाचन की प्रतीक्षा कर रहे हैं और दिल्ली इस आस में है कि मणिपुर के घाव समय के साथ स्वयं ही भर जाएंगे।

सत्य यह है कि जब तक न्याय, संवाद और समानता के आधार पर अविश्वास के इस 'पेंडोरा बॉक्स' को बंद नहीं किया जाएगा, तब तक मणिपुर का भस्मासुर शांत नहीं होगा। इतिहास गवाह है कि जो राष्ट्र अपनी सीमाओं के भीतर सुलगती अग्नि की अनदेखी करते हैं, उनकी संप्रभुता का महल अंततः धराशायी हो जाता है।

❍❍❍

मेधा की अंत्येष्टि

अनवर हुसैन

नीट–यूजी का खूनी सिंडिकेट और टूटता जन—शिवास

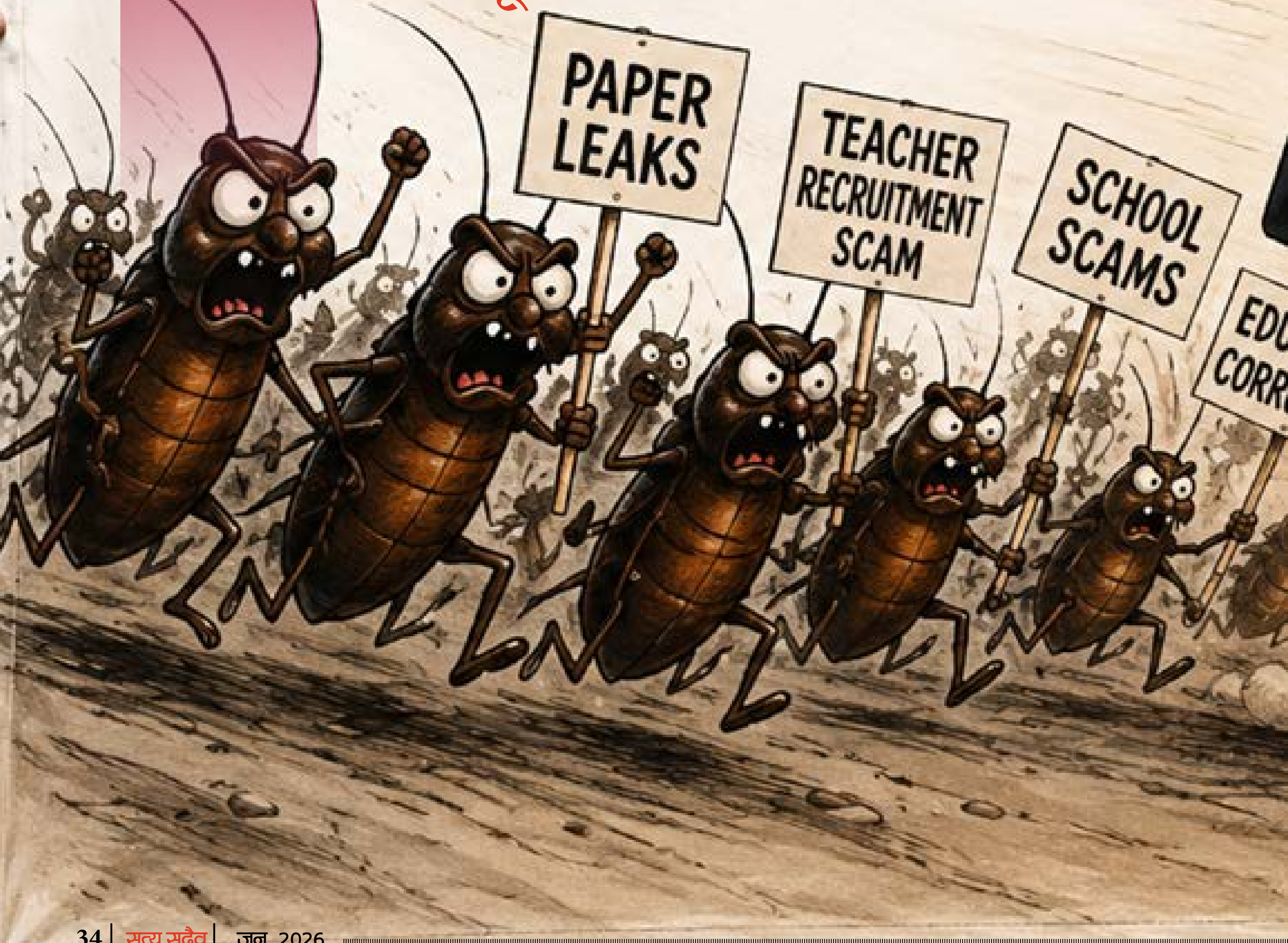

भारत की विशालतम चिकित्सा प्रवेश परीक्षा का प्रश्नपत्र क्या लीक हुआ, लाखों आकांक्षी युवाओं के स्वप्नों की सामूहिक अंत्येष्टि प्रारंभ हो गई। सीकर की गलियों से लेकर दिल्ली के सत्ता-गलियारों तक, यह विभीषिका अब केवल एक प्रशासनिक विफलता नहीं, बल्कि एक राष्ट्रीय त्रासदी बन चुकी है।

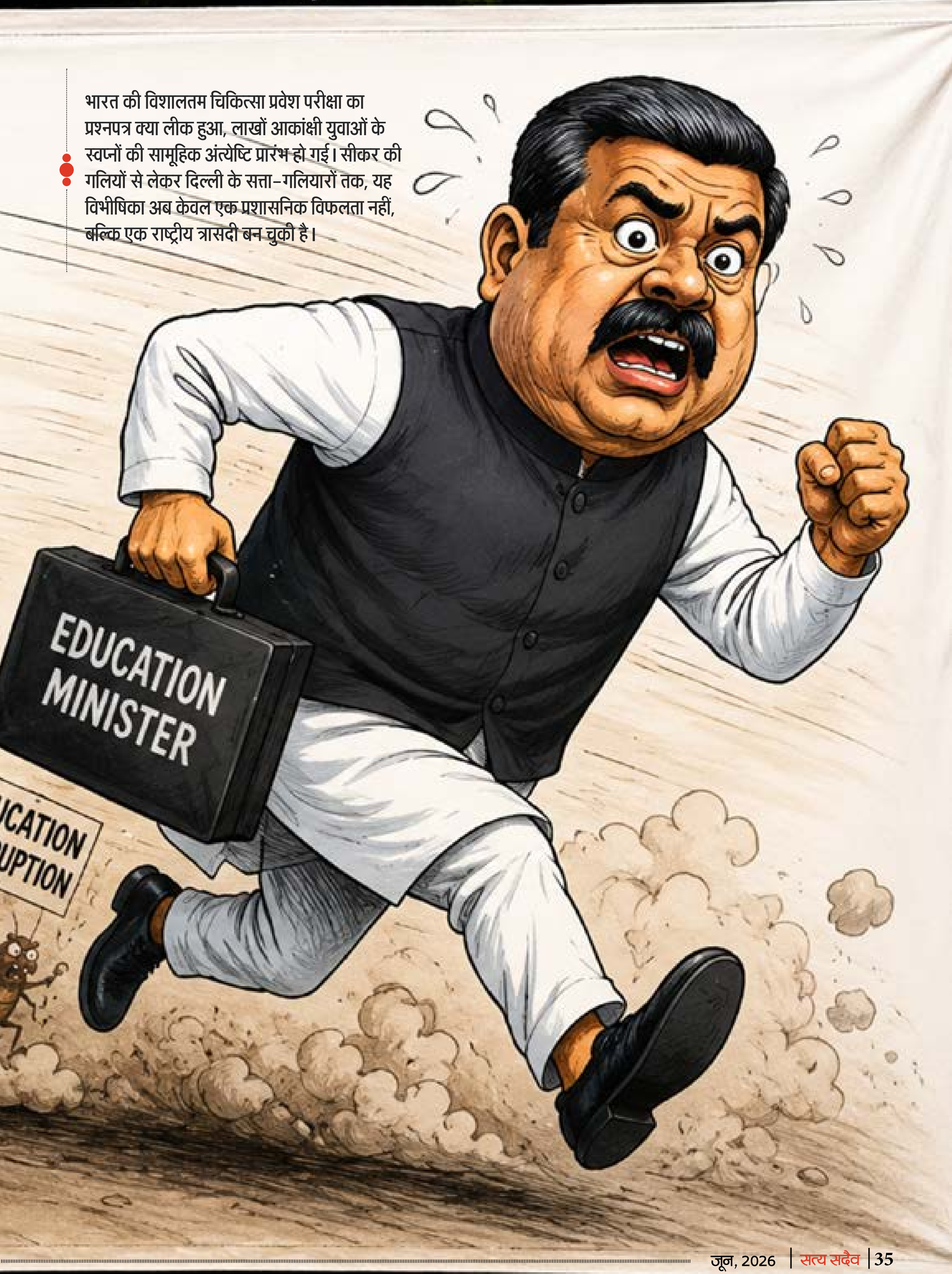

राजस्थान के कोचिंग हब सीकर के एक तंग और संकुचित कमरे में, 23 वर्षीय प्रदीप मानीच का मौन शरीर उस व्यवस्था पर सबसे प्रखर अभियोग है, जिसने न्याय को एक व्यापार बना दिया है। झुंझुनूं के एक निर्धन श्रमिक का पुत्र, प्रदीप, जिसके परिवार ने उसकी शिक्षा के लिए अपनी पैतृक भूमि तक बेच दी थी, समय के क्रूर परिहास को सहन नहीं कर सका। 3 मई की परीक्षा के उपरांत संजोई गई वह सूक्ष्म आशा 12 मई को नेशनल टेस्टिंग एजेंसी (एनटीए) द्वारा परीक्षा निरस्त किए जाने के साथ ही मृत्यु के पाश में परिवर्तित हो गई। प्रदीप का प्रस्थान केवल एक विद्यार्थी की आत्महत्या नहीं है,यह उस 'पवित्र संविदा' का विखंडन है जो एक राष्ट्र अपने युवाओं के साथ करता है। जब परिश्रम की परिणति केवल कैंसिलेशन और अनिश्चितता में हो, तो मेधा का दम घुटने लगता है।

> शिक्षा के इस 'डिजिटल कुरुक्षेत्र' में जब माफियाओं का अट्टहास मेधा के परिश्रम पर भारी पड़ने लगे, तो समाज की आधारशिला डगमगाने लगती है। सीकर के कोचिंग हब से उपजा यह कांड उस संस्थागत सड़न का साक्ष्य है, जिसने भारत के भविष्य को विधिक और मनोवैज्ञानिक शून्यता की ओर धकेल दिया है।

कैसे खुला पाप का घड़ा?

नीट-यूजी 2026 की साख का पतन किसी सीमावर्ती संघर्ष की भांति नाटकीय था। सीकर के एक संस्थान में उस समय हलचल मच गई जब एक मकान मालिक ने गेस पेपर के नाम पर प्रसारित हो रहे एक पीडीएफ को सार्वजनिक किया। रसायन विज्ञान के खंड को खंगालते ही अध्यापकों के पैरों तले की मिट्टी खिसक गई—सभी 45 प्रश्न वास्तविक परीक्षा के दर्पण थे। जिसे पहले एक मौसमी अफवाह माना गया था, वह कुछ ही घंटों में एक प्रलयंकारी घोटाले में रूपांतरित हो गया। राजस्थान पुलिस के स्पेशल ऑपरेशंस ग्रुप और केंद्रीय एजेंसियों के आगमन ने यह सिद्ध कर दिया कि सीकर अब केवल शिक्षा का केंद्र नहीं, बल्कि 'पेपर-लीक माफिया' का कुरुक्षेत्र बन चुका है।

समय की अपूरणीय क्षति

19 वर्षीय दिव्यांश शर्मा की व्यथा आधुनिक भारत के मध्यम वर्ग की नियति को स्वर देती है। पिता के अवसान के पश्चात, अपने भाई और संघर्षशील माता के सहयोग से दिव्यांश ने सीकर में एक वर्ष का कठिन वनवास भोगा। 664 अंकों की प्रत्याशा ने उसे सरकारी मेडिकल कॉलेज (मेडिकल कॉलेज) के द्वार तक पहुंचा दिया था, किंतु विधाता और भ्रष्ट तंत्र ने उसे पुनः उसी पेइंग गेस्ट की संकुचित दीवारों के भीतर धकेल दिया। दिव्यांश के लिए धन की हानि गौण है-वास्तविक संत्रास उस 'समय' का है जो उससे छीन लिया गया। सीकर अब उसके लिए शिक्षा का मंदिर नहीं, बल्कि एक ऐसी 'भावनात्मक वधशाला' है जहां प्रत्येक दिन केवल पुनरावृत्ति और पुनरीक्षण के बोझ तले दबता जा रहा है।

सीबीआई की कार्यवाही

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (सीबीआई) की हालिया गिरफ्तारियों ने इस घोटाले की अंतरराष्ट्रीय कड़ियों को उजागर किया है। पुणे के प्रोफेसर पी.वी. कुलकर्णी और बायोलॉजी की लेक्चरर मनीषा मंधारे की संलिप्तता ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह 'कैंसर' एनटीए के तंत्रिका तंत्र के भीतर तक प्रविष्ट हो चुका है। जांच एजेंसियां एक ऐसे अंतरराज्यीय नेटवर्क की पड़ताल कर रही हैं जहां प्रश्नपत्र 10 से 25 लाख रुपये की मलीन मुद्रा के बदले बेचे गए। यह हाइब्रिड श्रृंखला थी—जहां भौतिक पहुंच और व्हाट्सएप जैसे डिजिटल प्लेटफॉर्मों का उपयोग कर कंट्रोल्ड सर्कुलेशन के माध्यम से सौदेबाजी की गई। माफिया जानता था कि सार्वजनिक विमर्श में आने से पूर्व ही इस 'बौद्धिक रसद' को भुना लेना ही लाभ का महामंत्र है।

एनटीए की जर्जर साख और न्यायिक हस्तक्षेप

2017 में एक स्वायत्त निकाय के रूप में स्थापित एनटीए का उद्देश्य मानकीकरण और डिजिटल एकीकरण था, किंतु पिछले दो वर्षों में यह केवल सुरक्षा भंग और विसंगतियों का केंद्र बनकर रह गई है। 2024 के ग्रेस मार्क्स और संदिग्ध अंकों के विवाद के पश्चात, 2026 की यह घटना उस संस्था के लिए एक्जिस्टेंशियल क्राइसिस है। सर्वोच्च न्यायालय ने यद्यपि परीक्षा के पूर्ण निरस्तीकरण को एक 'अंतिम विकल्प' माना है, किंतु न्यायालय की यह टिप्पणी कि ₹एनटीए जैसे निकाय को 'फ्लिप-फ्लॉप' शोभा नहीं देता,₹ उस संवेदनहीनता पर एक तमाचा है। विधिक मापदंड भले ही 'प्रणालीगत पतन' के साक्ष्यों की मांग करें, किंतु छात्रों की आंखों में यह तंत्र पहले ही अपनी शुचिता खो चुका है।

वैश्विक प्रतिमान बनाम भारतीय जड़ता

शिक्षा विशेषज्ञों का तर्क है कि भारत की समस्या ओएमआर आधारित पेन-पेपर प्रणाली की पुरानी जकड़न में है। जब विश्व की श्रेष्ठ चिकित्सा परीक्षाएं जैसे एमकैट और यूएसएमएलई कंप्यूटर-आधारित परीक्षणों और विकेंद्रीकृत प्रश्न बैंकों का उपयोग कर रही हैं, तब भारत आज भी ट्रकों में बंद कागजों के भरोसे है। एआई-संचालित निगरानी और अनुकूली परीक्षण के माध्यम से लीक की संभावनाओं को शून्य किया जा सकता है, किंतु क्रियान्वयन के स्तर पर हम आज भी 20वीं शताब्दी में अटके हुए हैं। यूपीएससी की वह अजेय साख, जहां 2021 से 2026 के मध्य एक भी लीक दर्ज

नहीं किया गया, यह सिद्ध करती है कि समस्या सिस्टम में नहीं, बल्कि 'नियत' और 'निष्पादन' में है।

राजनैतिक दावानल और जवाबदेही का अभाव

विपक्ष ने इस जन-आक्रोश को एक 'राजनैतिक अस्त्र' में परिवर्तित कर दिया है। कांग्रेस अध्यक्ष मल्लिकार्जुन खड़गे ने इसे भारत के युवाओं के साथ 'निरंतर विश्वासघात' करार दिया है। धर्मेंद्र प्रधान जैसे मंत्रियों से त्यागपत्र की मांग और एनटीए के पूर्व महानिदेशकों को मडंराते संकट के मध्य महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त करने की आलोचना ने इस विमर्श को और भी तीक्ष्ण बना दिया है। क्या जांच केवल एक 'आई-वाश' बनकर रह जाएगी? यह प्रश्न प्रत्येक उस परिवार का है जिसका भविष्य प्रतियोगी परीक्षाओं की बलि वेदी पर चढ़ा दिया गया है।

भविष्य की पदचाप

नीट-यूजी 2026 की यह कथा भारत के उस 'सिसिफस' की व्यथा है, जो अपनी मेधा का पत्थर पहाड़ की चोटी तक ले जाता है, किंतु अंत में तंत्र का भ्रष्टाचार उसे पुनः रसातल की ओर धकेल देता है। गुरुग्राम की देवद्रिता हो या राजस्थान का दिव्यांश—इन युवाओं के लिए 21 जून की पुनः परीक्षा केवल एक 'टेस्ट' नहीं, बल्कि अपनी मानसिक स्थिरता को बनाए रखने की एक और जंग है।

भारत की चिकित्सा शिक्षा का यह संकट केवल सुधारों की मांग नहीं कर रहा -यह उस 'विश्वास की बहाली' की मांग कर रहा है जिसके बिना कोई भी राष्ट्र अपनी अगली पीढ़ी को स्वस्थ नहीं रख सकता। जब तक हम कागजों की सुरक्षा के स्थान पर 'चरित्र की शुचिता' को प्राथमिकता नहीं देंगे, तब तक टेलीग्राम पर 'नीट-री-एग्जाम' जैसे समूह नीलामियों का केंद्र बने रहेंगे। ○○○

AI

वैश्विक बिसात पर

भारत का अभ्युदय

कांस्टेंटिनो जेवियर

कृत्रिम मेधा, डेटा संप्रभुता और डिजिटल शासन के उभरते युग में भारत केवल तकनीक का उपभोक्ता नहीं, बल्कि वैश्विक मानकों का संभावित निर्माता बनकर उभर रहा है। प्रश्न यह है कि क्या नई दिल्ली लोकतांत्रिक मूल्यों और तकनीकी शक्ति के बीच वह संतुलन स्थापित कर पाएगी, जो 21वीं सदी की डिजिटल व्यवस्था को नई दिशा दे सके।

वैश्विक तकनीकी व्यवस्था के भविष्य का मानचित्र आज एक ऐसी निर्णायक संधि-बेला पर खड़ा है, जहां से निकलने वाला प्रत्येक मार्ग इतिहास की नई धारा निर्धारित करेगा। विश्व के विशालतम लोकतंत्र और तीव्रतम गति से उभरती अर्थव्यवस्था के रूप में, भारत आज उस सामरिक चौराहे पर विराजमान है, जहां उसका जनसांख्यिकीय लाभांश, सुदृढ़ संस्थागत अनुभव और अंतरराष्ट्रीय महत्वाकांक्षाएं मिलकर डिजिटल प्रणालियों के शासन की नई परिभाषा गढ़ रही हैं। यह केवल एक तकनीकी विवर्तन नहीं है, बल्कि यह एक सभ्यतागत प्रतिस्थापन है। जैसे-जैसे तकनीकी परिवर्तन का प्रवेग बढ़ रहा है और अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था का स्वरूप खंडित हो रहा है, भारत द्वारा अपने प्रभाव का प्रयोग ग्लोबल साउथ और लोकतांत्रिक प्रतिमानों के भविष्य के लिए दूरगामी परिणाम लेकर आएगा।

हाल के वर्षों में, भारत ने अपनी 'टेक-डिप्लोमेसी' अर्थात तकनीकी कूटनीति में जो निवेश किया है, वह किसी महाकाव्य के दृश्यों की भांति प्रखर है। अंतरराष्ट्रीय साझीदारियों का अन्वेषण, वैश्विक विमर्शों का आयोजन और अपने 'डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर' (डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर) मॉडल को विश्व के सम्मुख एक 'वैश्विक सार्वजनिक वस्तु' के रूप में प्रस्तुत करना—ये सभी प्रयास भारत की उस घरेलू छटपटाहट का विस्तार हैं, जो तकनीक के माध्यम से आर्थिक विकास और उत्तरदायी शासन को संतुलित करना चाहती है।

कृत्रिम मेधा इसका एक ज्वलंत उदाहरण है। भारत के नवीन 'एआई शासन दिशा-निर्देश 2026' लोकतांत्रीकरण, विस्तार और समावेशिता के सात सिद्धांतों पर आधारित हैं। इनका ध्येय यह सुनिश्चित करना है कि कृत्रिम मेधा की शक्ति चंद कंपनियों या विशिष्ट भौगोलिक क्षेत्रों में केंद्रित न रह जाए। यह नई दिल्ली की उस गहरी चिंता का प्रतिबिंब है कि नई तकनीकों का प्रयोग वर्तमान भू-राजनीतिक व्यवस्था को जड़वत करने और उभरती शक्तियों के विकास पथ को अवरुद्ध करने के लिए किया जा सकता है। भारत का यह दृष्टिकोण उसके अतीत के रक्षात्मक व्यापारिक रुख से पूर्णतः भिन्न और 'प्रो-एक्टिव' है।

लोकतंत्र की प्रयोगशाला

भारत वैश्विक तकनीकी व्यवस्था को किस प्रकार आकार देगा, इसे समझने के लिए 1947 के पश्चात की उसकी लोकतांत्रिक यात्रा का अवलोकन अनिवार्य है। यद्यपि वर्तमान समय में भारतीय लोकतंत्र की विसंगतियों, विधि के शासन और नागरिक अधिकारों पर गहन विमर्श जारी है, किंतु तकनीकी नियमन के क्षेत्र में भारत का रिकॉर्ड उसे चीन या रूस जैसे अधिनायकवादी राष्ट्रों की तुलना में लोकतांत्रिक समकक्षों के अधिक समीप खड़ा करता है। चुनौतियों और त्रुटियों के पश्चात भी, भारत का तकनीकी शासन स्पष्ट रूप से लोकतांत्रिक है—जहां विधायी विचार-विमर्श, न्यायपालिका की सक्रियता और नागरिक समाज की भागीदारी अनिवार्य स्तंभ हैं।

यही गतिशीलता भारत की तकनीकी नीति को बहुलतावादी बनाती है। यद्यपि यह अधिनायकवादी मॉडलों की तुलना में मंद और जटिल प्रतीत हो सकती है, किंतु यह विविध हितधारकों के दबावों के प्रति अधिक संवेदनशील और उत्तरदायी है। 2017 के पश्चात जब भारतीय नौकरशाही ने डिजिटल निजता के मॉडल की खोज प्रारंभ की, तो उनका नैसर्गिक झुकाव वाशिंगटनऔर ब्रसेल्स की ओर था, न कि बीजिंग या मास्कोकी ओर। इसी झुकाव ने 'यूएस-इंडिया ट्रस्ट' पहल और 'ईयू-इंडिया ट्रेड एंड टेक्नोलॉजी काउंसिल' जैसी साझीदारियों की आधारशिला रखी, जिन्होंने तकनीक को व्यापार और सुरक्षा के साथ समन्वित कर दिया।

सामरिक संरेखण के जोखिम

भारत के घरेलू तकनीकी निर्णय किसी निर्वात में नहीं लिए गए हैं। नई दिल्ली निरंतर अमेरिका और चीन के मध्य जारी भू-राजनीतिक महासमर का सूक्ष्म प्रेक्षण कर रही है। भारत तकनीकी कूटनीति के रणांगण में किस सीमा तक प्रवेश करेगा, यह तीन प्रमुख संरचनात्मक चुनौतियों के मूल्यांकन पर निर्भर करता है।

प्रथम चुनौती भू-आर्थिक है। यद्यपि वैश्वीकरण ने व्यापार और आपूर्ति-श्रृंखला में परस्पर निर्भरता के अभूतपूर्व स्तर स्थापित किए हैं, किंतु हाल के वर्षों में इसी अंतर्निर्भरता को एक शस्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा है। भारत ने इसे राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प के टैरिफ युद्ध और चीन द्वारा दुर्लभ खनिजों के निर्यात पर लगाए गए प्रतिबंधों के माध्यम से अनुभव किया है। अतीत के व्यापारिक या जलवायु समझौतों के विपरीत, आज कृत्रिम मेधा या साइबरस्पेस को विनियमित करने के लिए किसी वैश्विक सर्वसम्मति या बाध्यकारी संधियों की कोई यथार्थवादी संभावना दृष्टिगोचर नहीं हो रही है।

द्वितीय चुनौती राजनैतिक है। वैश्विक स्तर पर

चार स्तंभों पर टिका भविष्य

इस उथल-पुथल भरे वातावरण में, भारत एक विलक्षण स्थिति में है। वह इकलौता ऐसा उभरता लोकतंत्र है जिसके पास वैश्विक तकनीकी मानदंडों को आकार देने की सामरिक रुचि और भौतिक क्षमता दोनों विद्यमान हैं। चार प्रमुख विशेषताएं भारत के इस विधिक और सामरिक प्रोफाइल को परिभाषित करती हैं:

1. **संस्थागत नींव:** भारत की लोकतांत्रिक संस्थाएं और स्वतंत्र न्यायपालिका उन दावों को एक नैतिक आधार प्रदान करती हैं, जिनकी प्रतिकृति अधिनायकवादी प्रतियोगी प्रस्तुत नहीं कर सकते। 2017 में सुप्रीम कोर्ट द्वारा निजता के अधिकार को मौलिक अधिकार घोषित करना इसी लोकतांत्रिक शुचिता का प्रमाण है, जिसने 'आधार' के स्वरूप और बाद के 'डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम' (डीपीडीए) को विधिक गरिमा प्रदान की।
2. **जनसांख्यिकीय लाभांश:** 150 करोड़ की जनसंख्या और तीव्र गति से बढ़ता हुआ इंजीनियरिंग

एवं उद्यमी वर्ग भारत को वैश्विक नवाचार अर्थव्यवस्था में एक संरचनात्मक भार प्रदान करता है। प्रश्न यह है कि क्या नई दिल्ली इस प्रतिभा समूह का उपयोग एक 'भारतीय लार्ज लैंग्वेज मॉडल' (एलएलएम) विकसित करने के लिए कर पाएगी जो चीनी या अमेरिकी तकनीकी वर्चस्व को चुनौती दे सके।

3.विशाल बाजारः भारत का बढ़ता हुआ मध्यम वर्ग और वित्त, स्वास्थ्य एवं कृषि के क्षेत्रों में तकनीकी उपयोग की असीम संभावनाएं वैश्विक उद्योगों के लिए एक ऐसा पुरस्कार हैं, जिसे कोई भी अनदेखा नहीं कर सकता। भारत-यूरोपीय संघ मुक्त व्यापार समझौता इसी बाजार शक्ति का आकर्षण है।

4. अंतरराष्ट्रीय महत्वाकांक्षाः जी-20 की अध्यक्षता, 'ग्लोबल साउथ' का नेतृत्व और 'एआई इम्पैक्ट समिट 2026' का आयोजन यह सिद्ध करता है कि भारत अब वैश्विक नियमों का मात्र अनुगामी नहीं, बल्कि नियंता बनना चाहता है।

लोकलुभावन आंदोलनों ने लोकतांत्रिक संस्थाओं और राज्य की नियामक क्षमता पर जन-विश्वास को कम किया है। यह दुष्चक्र तकनीकी रूप से सशक्त निगरानी तंत्र वाले चीनी मॉडल के लिए एक अनुकूल वातावरण निर्मित कर रहा है। नई दिल्ली इस राजनैतिक रिक्तता को देख रही है और बीजिंग की इस वैचारिक बढ़त के प्रति सशंकित है।

तृतीय और सर्वाधिक महत्वपूर्ण चुनौती अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था के भविष्य और विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका की भूमिका से संबंधित है। पिछले दो दशकों में वाशिंगटन भारत का सर्वप्रमुख सामरिक साझीदार रहा है, किंतु हाल के वर्षों में अमेरिका का बहुपक्षीय ढांचों से पीछे हटना और लोकतांत्रिक प्रतिमानों के प्रति उसकी घटती प्रतिबद्धता ने एक सामरिक रिक्तता उत्पन्न कर दी है।

चीन का विस्तारवाद और लोकतांत्रिक शक्तियों की दुविधा

जब अमेरिका और यूरोपीय संघ आंतरिक चुनौतियों और राजकोषीय बाधाओं के कारण अपनी नियामक शक्ति खो रहे हैं, तब चीन विपरीत दिशा में तीव्र गति से अग्रसर है। बीजिंग उन अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं और विनियामक ढांचों में भारी निवेश कर रहा है जो व्यक्तिगत अधिकारों के ऊपर राज्य की संप्रभुता को प्राथमिकता देते हैं। चीन का 'डिजिटल सिल्क रोड' निगरानी, डेटा केंद्रीकरण और राजनैतिक नियंत्रण पर आधारित एक अधिनायकवादी शासन मॉडल को 'ग्लोबल साउथ' में प्रतिरोपित कर रहा है।

इसका परिणाम एक विखंडित अंतरराष्ट्रीय वातावरण के रूप में सामने आया है। दांव पर अब केवल विचारधारा नहीं, बल्कि भविष्य की आर्थिक समृद्धि भी है। कल की डिजिटल अर्थव्यवस्था के निवेशकों को उन विनियामक ढांचों और डेटा मानकों का पालन करना होगा जिन्हें चीन आकार दे रहा है। यदि भारत जैसी लोकतांत्रिक शक्तियां इस समय मानक निर्धारण की प्रक्रिया में अग्रणी भूमिका नहीं निभातीं, तो वे न केवल सामरिक लीवरेज खो देंगी, बल्कि भविष्य के आर्थिक प्रतिफलों से भी वंचित रह जाएंगी।

तीन संभावित पथ

भारत के सम्मुख तकनीकी नेतृत्व के तीन व्यापक पथ विद्यमान हैं। प्रथम लोकतांत्रिक परिदृश्य है, जहां भारत अन्य स्वतंत्र समाजों के साथ मिलकर पारदर्शी, उत्तरदायी और निजता-रक्षित तकनीकी प्रणालियों को वैश्विक सार्वजनिक वस्तु के रूप में बढ़ावा देता है। द्वितीय तटस्थ परिदृश्य है, जहां भारत सामरिक रूप से गुटनिरपेक्ष बना रहता है और प्रतिस्पर्धी गुटों के मध्य लचीलापन बनाए रखते हुए स्वयं को वैचारिक युद्धों से पृथक रखता है। तृतीय और विनाशकारी परिदृश्य अधिनायकवादी संरेखण का है, जहां भारत सुरक्षा की अनिवार्यताओं के नाम पर निजता और पारदर्शिता को राजनैतिक नियंत्रण के अधीन कर देता है।

वर्तमान में, भारत का नैसर्गिक स्थान लोकतांत्रिक खेमे में ही है। 'इंडिया स्टैक' और 'यूपीआई'जैसे सफल प्रयोग इसी लोकतांत्रिक तकनीकी कूटनीति के उदाहरण हैं, जो 'ग्लोबल साउथ' को चीन के निगरानी मॉडल और अमेरिका के निजी क्षेत्र के प्रभुत्व का एक सशक्त लोकतांत्रिक विकल्प प्रदान करते हैं।

भविष्य की पदचाप

विश्व का कोई अन्य देश भारत की भांति जनसांख्यिकीय विस्तार, लोकतांत्रिक साख, तकनीकी क्षमता और भू-राजनीतिक स्थिति का ऐसा समन्वय प्रस्तुत नहीं करता, जो उभरती हुई अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था में लोकतांत्रिक तकनीकी शासन के आधार स्तंभ के रूप में कार्य कर सके। आने वाले वर्षों में भारत के तकनीकी निर्णय न केवल उसकी अपनी नियति तय करेंगे, बल्कि भविष्य की वैश्विक व्यवस्था के लोकतांत्रिक चरित्र को भी निर्धारित करेंगे। भारत की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि वह घरेलू स्तर पर अपने लोकतांत्रिक संस्थानों के स्वास्थ्य की रक्षा कैसे करता है और तकनीकी नीति पर बढ़ते राज्य नियंत्रण के प्रलोभन का प्रतिकार कैसे करता है। विदेश नीति के मोर्चे पर, भारत को लोकतांत्रिक शक्तियों का एक ऐसा 'कंसर्ट' निर्मित करना होगा जो द्विपक्षीय और बहुपक्षीय ढांचों के माध्यम से नीतियों का समन्वय कर सके।

अमेरिका ऐतिहासिक रूप से भारत का अपरिहार्य साझीदार रहा है। उसका कूटनीतिक जड़ता से बाहर निकलना और भारत के साथ लोकतांत्रिक मानदंडों के निर्माण में पुनः संलग्न होना वैश्विक स्थिरता के लिए आवश्यक है। भारत अब उस रिक्तता को भरने के लिए सन्नद्ध है जिसे अमेरिका और यूरोप ने खाली छोड़ा है। यह भारत का समय है, और इस समय की सार्थकता इस बात में है कि वह तकनीक को विनाश की मशाल बनाने के स्थान पर लोकतांत्रिक ज्ञान का दीपक बनाए। ०००

-लेखक कॉन्स्टेंटिनो जेवियर, सेंटर फॉर सोशल एंड इकोनॉमिक प्रोग्रेस में सीनियर फेलो हैं।

शिलाओं से सत्य का अनावरण

संदीप कुमार

धार की भोजशाला में न्यायालय और पुरातात्विक साक्ष्यों ने एक ऐसे ऐतिहासिक सत्य को पुनः उजागर किया है, जो सदियों से विवाद और उपेक्षा की परतों में दबा था। यह निर्णय केवल आस्था का नहीं, बल्कि इतिहास, स्मृति और सांस्कृतिक पुनर्स्थापन के अधिकार का भी प्रश्न है।

इतिहास के गर्भ में दफन सत्य जब पाषाणों की भाषा में मुखर होता है, तो कूटनीति के संकुचित गलियारे स्वतः ही न्याय के आलोक से प्रदीप्त हो उठते हैं। मध्य प्रदेश के धार जनपद में स्थित 'भोजशाला' केवल एक विवादित संरचना नहीं है,यह भारत की उस महान ज्ञान-परंपरा और सभ्यतागत संप्रभुता का अवशेष है, जिसे समय की धूल और विदेशी आक्रांताओं के उन्माद ने विरूपित करने का निष्फल प्रयास किया था। मई का कालखंड धार की इस पावन धरा के लिए एक 'ऐतिहासिक परिशोधन' का साक्षी बना है, जहां न्यायपालिका ने पुरातात्विक साक्ष्यों की कसौटी पर आस्था के उस प्राचीन दीप को पुनः प्रज्वलित किया है, जो सदियों से उपेक्षा के अंधकार में टिमटिमा रहा था।

विस्मृत इतिहास के प्रथम अन्वेषक

इस गाथा का प्रारंभ वर्ष 1903 में होता है, जब धार राज्य के एक मेधावी लोक सेवक काशीनाथ कृष्ण लेले को एक ऐसा उत्तरदायित्व सौंपा गया, जो उनके संस्कृत पांडित्य और शिलालेखों को पढ़ने की विलक्षण सामर्थ्य के सर्वथा अनुकूल था। स्थानीय हिंदुओं के मध्य 'राजा भोज का मदरसा' के रूप में विख्यात इस स्थल का सूक्ष्म अन्वेषण करते समय लेले ने अनुभव किया कि वहां की दीवारों पर अंकित लिपि उस मस्जिद के अस्तित्व से कहीं अधिक पुरातन है, जिसे 'कमाल मौला मस्जिद' कहा जाता था। उन्होंने अपनी 'फोरेंसिक' सूक्ष्मता से यह सिद्ध किया कि ये शिलालेख 11वीं शताब्दी के महान परमार वंश के योद्धा राजा भोज और उनके उत्तराधिकारियों के वैभवशाली कालखंड के हैं।

बर्बरता के उस दौर में, जहां शिलालेखों को अप्राप्य बनाने के लिए उन्हें घिस दिया गया था या फर्श के पत्थरों के रूप में प्रयुक्त किया गया था, लेले ने दो विशाल ‘कृष्ण पाषाणों’ की खोज की जो सौभाग्य से विनाश से बच गए थे। इन शिलाओं पर अंकित रचनाएं परमार राजवंश के इतिहास और संस्कृत व्याकरण के गूढ़ नियमों का उद्घाटन कर रही थीं। कालांतर में, ब्रिटिश एजेंट मेजर सी.ई. लुअर्ड ने इन निष्कर्षों को विधिक और ऐतिहासिक आधार प्रदान किया और आधिकारिक रूप से इस स्थान को ‘भोजशाला’ के रूप में मान्यता दी—वह स्थान जो केवल एक मंदिर नहीं, बल्कि महान राजा भोज द्वारा स्थापित एक विश्वविद्यालय भी था।

न्यायिक विलेख से120 वर्ष पश्चात सत्य का अनावरण

लेले और लुअर्ड द्वारा खोजी गई वह सत्य की कणी 120 वर्ष पश्चात मई 2026 में एक प्रचंड प्रकाश पुंज में रूपांतरित हो गई। 15 मई को मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की इंदौर खंडपीठ ने एक ऐतिहासिक निर्णय सुनाते हुए धार की भोजशाला में हिंदुओं के अनन्य पूजा के अधिकार को बहाल कर दिया। न्यायालय ने भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) के उस प्रतिवेदन से पूर्ण सहमति व्यक्त की, जिसमें यह स्पष्ट रूप से रेखांकित किया गया था कि वर्तमान मस्जिद का निर्माण पूर्व-स्थित एक विशाल मंदिर और पुस्तकालय के ध्वंसावशेषों पर किया गया था।

न्यायालय का यह आदेश वर्ष 2003 के उस प्रशासनिक आदेश की अंत्येष्टि है, जिसने राजनीति और तुष्टीकरण के वशीभूत होकर इस पावन स्थल को साझा उपयोग की वस्तु बना दिया था। उच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि अयोध्या मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित 10 सिद्धांतों के आलोक में भोजशाला का चरित्र पूर्णतः हिंदू धार्मिक और सांस्कृतिक केंद्र का है। यह निर्णय केवल एक विधिक आदेश नहीं है, बल्कि यह उस ऐतिहासिक विद्रूपता का सुधार है जिसने दशकों तक सांप्रदायिक तनाव को संचित रखा था।

2003 का छलावा और 'बंटाधार' कूटनीति

भोजशाला के संघर्ष का एक काला अध्याय अप्रैल 2003 के उस 'प्रायोजित समाधान' से जुड़ा है, जिसे तत्कालीन कांग्रेस सरकार ने चुनावी लाभ के लिए गढ़ा था। तत्कालीन मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह के शासनकाल में हिंदुओं को केवल मंगलवार और बसंत पंचमी के दिन ‘कुछ दाने चावल और पुष्प’ ले जाने की अनुमति दी गई थी, जबकि शुक्रवार को नमाज के लिए मस्जिद के द्वार खोल दिए गए थे। यह 'समाधान' वास्तव में उस समस्या को और अधिक जटिल बनाने का एक कृत्य था, जिसने हिंदुओं की आस्था को विधिक सीमाओं में कैद कर दिया था।

संसदीय अभिलेखों के अनुसार, तत्कालीन संस्कृति मंत्री जगमोहन ने भी इस व्यवस्था को व्यावहारिक विवशता माना था, किंतु यह कभी भी समस्या का स्थाई अंत नहीं था। भाजपा ने उस समय इस व्यवस्था को 'बंटाधार' नीति का हिस्सा बताया था, जो राष्ट्र की सांस्कृतिक धरोहरों के संरक्षण में विफल रही थी। 2003 का वह आदेश भोजशाला के मूल चरित्र और उसके ऐतिहासिक महत्व की अनदेखी करने का एक क्लासिक उदाहरण था।

जब मिट्टी ने सत्य उगला

11 मार्च 2024 को उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए सर्वेक्षण के आदेश के पश्चात एएसआई ने अत्यंत सूक्ष्म और 'न्यूनतम आक्रामक' उत्खनन प्रक्रिया प्रारंभ की। 4 से 5 मीटर की गहराई पर मिट्टी की परतों के नीचे जो प्राप्त हुआ, उसने समूचे विश्व

को स्तब्ध कर दिया। वहां एक 'पूर्व-विद्यमान विशाल संरचना' के प्रमाण मिले, जो निर्विवाद रूप से 10वीं-11वीं शताब्दी के परमार काल के थे।

सर्वेक्षण के दौरान कुल 94 प्रतिमाएं और उनके खंडित अंश प्राप्त हुए, जिनमें गणेश, ब्रह्मा, नरसिंह और भैरव के साथ-साथ सिंह, गज, सर्प और कच्छप जैसे पौराणिक बिम्ब अंकित थे। किसी भी मस्जिद में मानवीय या पशु आकृतियों का होना इस्लामी मान्यताओं के विरुद्ध है, जो यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त था कि इन स्तंभों और शिलाओं कोखंडित कर उन्हें मस्जिद के ढांचे में जबरन जड़ा गया था। 150 से अधिक संस्कृत और प्राकृत शिलालेखों ने इस स्थल को ̔शारदा सदन ̔ अर्थात मां सरस्वती की आराधना और ज्ञान के केंद्र के रूप में प्रमाणित किया।

वाग्देवी का विस्थापन और घर वापसी की प्रतीक्षा

भोजशाला की पहचान जिस 'वाग्देवी' (सरस्वती) की प्रतिमा से जुड़ी है, वह वर्तमान में ब्रिटिश संग्रहालय में एक निर्वासित देवी की भांति विराजमान है। उच्च न्यायालय ने केंद्र सरकार को यह सुझाव दिया है कि वह इस प्राचीन और पवित्र प्रतिमा की 'घर वापसी' के लिए विधिक प्रयास तेज करे। निर्णय में यह भी स्पष्ट किया गया कि यह मामला केवल मालिकाना हक का नहीं है, बल्कि उस स्थल के 'वास्तविक स्वरूप' को पुनर्स्थापित करने का है।

इतिहास साक्षी है कि 1305 ईस्वी में अलाउद्दीन खिलजी के आक्रमण ने भोजशाला के स्वरूप को रक्त और अग्नि से विद्रूप कर दिया था। उसके पश्चात क्रमिक सल्तनतों ने वहां अनेक इस्लामी संरचनाएं निर्मित कीं, किंतु वे हिंदुओं की स्मृति से उस 'ज्ञान के मंदिर' को विलोपित नहीं कर सकीं।

आस्था का नव-उन्मेष

18 मई 2026 की वह भोर जब श्रद्धालुओं ने भोजशाला की देहरी लांघी, तो उनके हाथों में केवल पुष्प नहीं थे, बल्कि वह संचित विश्वास था जो सदियों के संघर्ष के पश्चात विधिक गरिमा प्राप्त कर चुका था। भोजशाला का यह प्रकरण सिद्ध करता है कि कूटनीतिक समझौते समय के घावों को केवल ढंक सकते हैं, किंतु न्याय का शिलालेख ही उन्हें सदैव के लिए भर सकता है। धार की यह भूमि अब केवल राजा भोज के गौरव की गाथा नहीं कहेगी, बल्कि यह आधुनिक भारत के उस संकल्प का भी प्रतीक होगी जहां इतिहास के साथ न्याय करना ही भविष्य की अखंडता की पहली शर्त है। ○○○

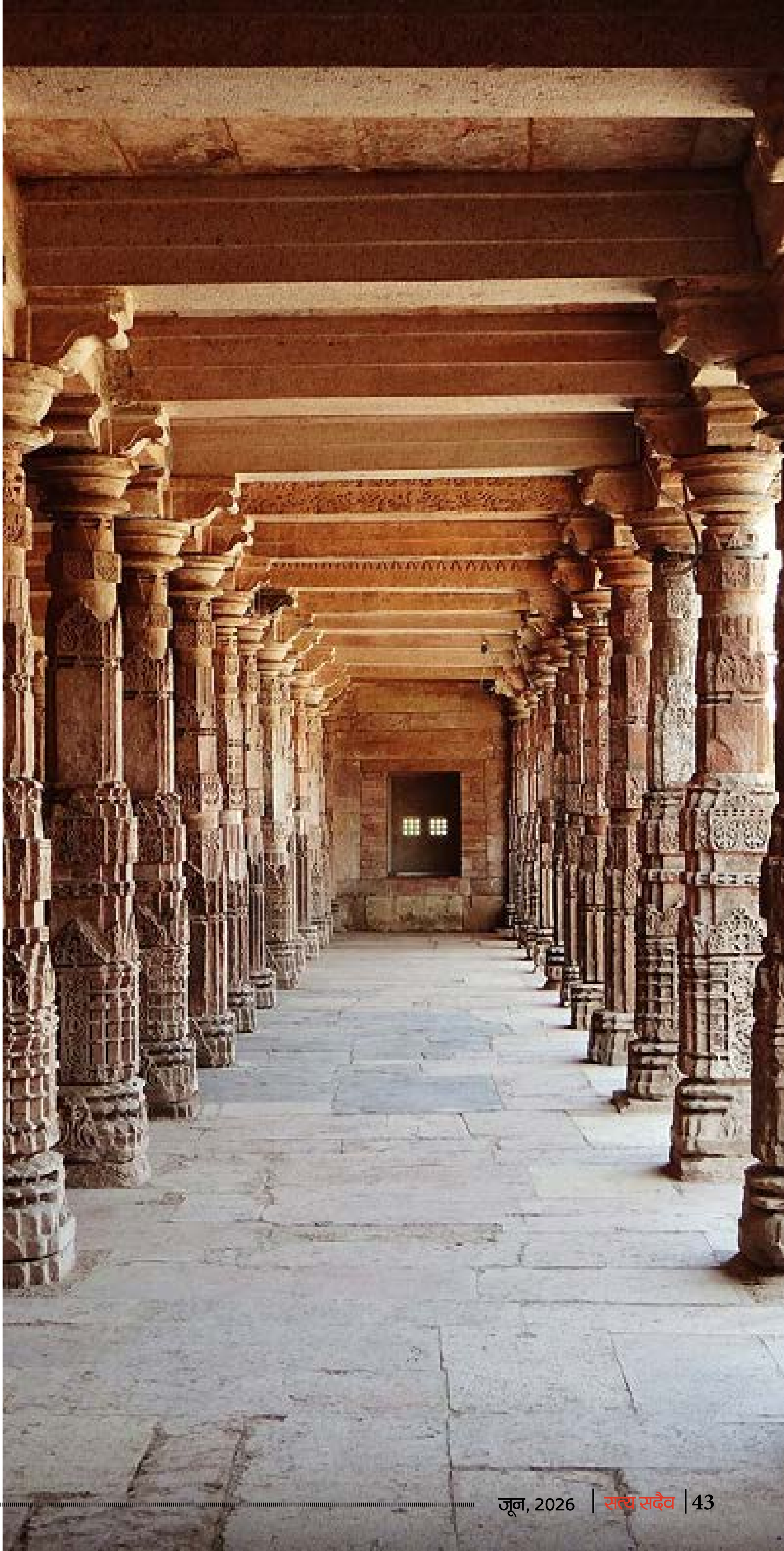

भूमि ने किया पिंक ई-रिक्शा पहल का समर्थन

मुंबई में 'ड्राइव हर फ्यूचर' नाम से एक पहल की शुरुआत की गई, जिसका उद्देश्य महिलाओं को रोजगार देना, उन्हें आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से मजबूत बनाना है। इस अभियान के तहत शुरू की गई पिंक ई-रिक्शा पहल को लेकर बॉलीवुड अभिनेत्री भूमि पेडनेकर ने अपना खुलकर समर्थन दिया। उन्होंने कहा कि जब महिलाओं को कमाने और अपने पैरों पर खड़े होने का मौका मिलता है, तो न सिर्फ उनका जीवन बदलता है, बल्कि पूरे समाज और देश की प्रगति भी तेज हो जाती है। मुंबई में आयोजित लॉन्च कार्यक्रम के दौरान भूमि पेडनेकर ने इस पहल की जमकर सराहना की। उन्होंने कहा, ''यह पहल पर्यावरण, महिला सुरक्षा और महिला सशक्तिकरण – इन तीनों मुद्दों को एक साथ जोड़ती है। अक्सर लोग महिला सशक्तिकरण की बातें तो करते हैं, लेकिन बहुत कम ऐसे कदम देखने को मिलते हैं जो वास्तव में महिलाओं की जिंदगी में बदलाव लाएं। यह एक ऐसा काम है जो महिलाओं को सीधे तौर पर फायदा पहुंचाएगा।'' भूमि पेडनेकर ने कहा, ''इस कदम के तहत महिला चालकों को ई-रिक्शा दिए जाएंगे, जिससे वे खुद रोजगार कमा सकेंगी। आर्थिक स्वतंत्रता किसी भी महिला को मजबूत बनाने का सबसे बड़ा माध्यम है। जब किसी महिला के पास अपनी आय का स्रोत होता है, तो उसका आत्मविश्वास बढ़ता है और वह अपने फैसले खुद लेने में सक्षम बनती है। अगर देश की महिलाएं सक्षम और आत्मनिर्भर होंगी, तो देश की विकास गति भी तेज होगी और समाज में सुरक्षा का माहौल भी बेहतर बनेगा।''

अभिनेत्री ने आगे कहा, ''इस पहल की सबसे खास बात यह है कि यह केवल महिलाओं के लिए अवसर पैदा नहीं कर रही, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान दे रही है। मुंबई में शुरुआत के तौर पर एक हजार पिंक ई-रिक्शा लॉन्च किए जा रहे हैं। इसके बाद महाराष्ट्र में कुल 12 हजार ई-रिक्शा उपलब्ध कराने का लक्ष्य रखा गया है। भविष्य में इस योजना को अन्य राज्यों तक भी पहुंचाया जाएगा, ताकि देशभर की महिलाओं को इसका लाभ मिल सके।''

इस कार्यक्रम में भूमि पेडनेकर के साथ अमृता फडणवीस और साहेर भामला भी मौजूद रहे।

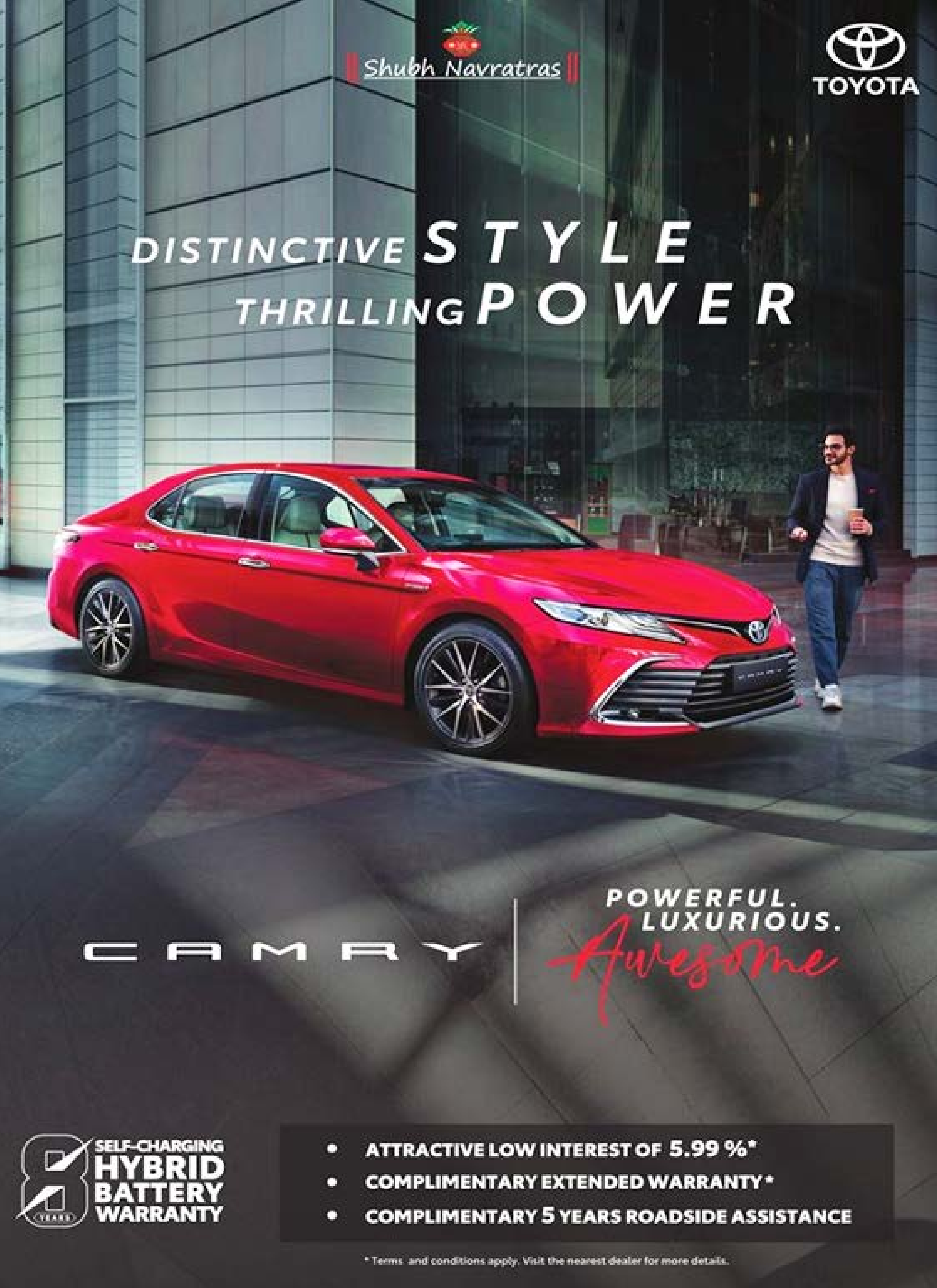
Shubh Navratras
TOYOTA
DISTINCTIVE STYLE
THRILLING POWER
CAMRY
POWERFUL.
LUXURIOUS.
Awesome
SELF-CHARGING
HYBRID
BATTERY
WARRANTY
8 YEARS
• ATTRACTIVE LOW INTEREST OF 5.99 %*
• COMPLIMENTARY EXTENDED WARRANTY*
• COMPLIMENTARY 5 YEARS ROADSIDE ASSISTANCE
* Terms and conditions apply. Visit the nearest dealer for more details.

PRGI NO : DELHIN/2017/74560

Let's 360°

- Media Consultancy
- Web solution
- Advertising
- Publication
- Languages Services
- Survey & Research
- Branding
- AV Production
- Campaign management
- Event organizer
- PR partner, PR associate
- Content writer & provider
- Media analyst

URJAS MEDIA VENTUE IS PERHAPS THE ONLY CONSULTING FIRM THAT CAN GIVE YOUR ORGANISATION A 360 DEGREE MEDIA BUSINESS GROWTH CONSULTING THROUGH IT'S 360 CAPABILITIES. FOR US, CONSULTING DOES NOT ONLY MEAN MECHANICAL COST REDUCTION THROUGH BETTER IT APPLICATIONS, WE FIND OUT WHAT YOUR ORGANISATION REALY NEEDS AND GIVE YOU AN INTELLECTUAL SOLUTION THAT HELP YOU REDUCE COST AS WELL AS HELPS YOURS BUSINESS GROW AND BEAT THE COMPETITION.

NOW!! OUR CONSULTANT WILL GET BACK TO YOU IN 24 HOURS AND PUT YOU IN TO THE HIGH GROWTH PATH

URJAS MEDIA
VENTURE

BEAT THE COMPETITION

www.urjasmedia.com

SMS 'BUSINESS GROWTH' TO +91-8826-24-5305 OR
E-MAIL info@urjasmedia.com